महावीर-निर्वाण का ढाई हजारवाँ मंगल-वर्ष

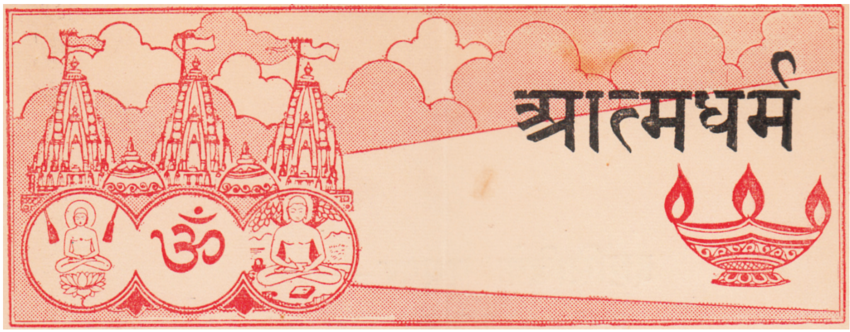

पधारो वीरप्रभु! पधारो जिनवाणी माता! पधारो कुन्दकुन्ददेव! जगत के सर्वोत्कृष्ट रत्न ऐसे आप तीनों के पधारने से हमारा ज्ञानमंदिर तथा परमागममंदिर-दोनों अतिशयरूप से शोभायमान हो उठे हैं। आपका चिंतन करने से शांतरस की शीतल फुहारों से हमारा चैतन्य-उद्यान खिल उठा है। अहा! ऐसा त्रिवेणी-संगम पूज्य स्वामीजी के प्रताप से हमें प्राप्त हुआ है, वह भव्यजीवों को मुक्तिमार्ग दरशाता है... हे भव्यों! आओ! यहाँ मोक्ष का मार्ग खुला है!

तंत्री-**पुरुषोत्तमदास शिवलाल कामदार** * संपादक : **ब्रह्मचारी हरिलाल जैन**
वीर सं० 2500 फाल्गुन (चन्दा : चार रुपये) वर्ष 29 : अंक नं० 11

इष्टसिद्धि के पथ पर—

जिससे इष्ट की सिद्धि हो, ऐसा 'इष्ट-उपदेश' देकर भगवान महावीर ने हमें इष्टसिद्धि का पंथ बतलाया है। यह पंथ तो जगत के सर्व जीवों के लिये है, परंतु सभी जीव इस पंथ में नहीं आते... निकट मुक्तिगामी कोई विरले जीव ही इस पावन पंथ में आते हैं... और जो इस पंथ में आते हैं, वे जीव परम इष्ट ऐसी चैतन्यशांति को पाकर कृतार्थ हो जाते हैं, वे अनंत भगवंतों की पंक्ति में खड़े हो जाते हैं।

अहा, ऐसा मार्ग आज हमें पूज्य स्वामीजी के प्रताप से प्राप्त हुआ है... पूज्य स्वामीजी ने हमें उस इष्ट मार्ग में लिया है। जीव को ऐसे इष्टमार्ग की प्राप्ति ही कल्याण का सबसे महान उत्सव है। तीर्थंकरों के पंचकल्याणक हों या उनका उपदेश हो, वह भी ऐसे आत्मकल्याण के हेतु ही उपकारी हैं।

साधर्मी बंधुओं! कल्याण के ऐसे महान अवसर को पाकर, अब एक क्षण भी गँवाये बिना इष्टसिद्धि के पथ पर बढ़ना, वह मुमुक्षु का कार्य है। बहुत जीवन बीत गया... अनेक वर्ष बीत गये... परंतु अब सुख का भंडार हाथ लगा है, शांति का समुद्र सामने उमड़ रहा है... ऐसे समय में दुःख और अशांति कौन एक क्षण भी सहन करेगा ?... अहा! देखो तो चैतन्यतत्त्व की मधुरता कैसी अद्‌भुत है! कितनी शांति और निःस्पृहता एवं एकता से वह सुशोभित हो रहा है! वह दूर नहीं है, आच्छादित नहीं है... स्वयं ही अपना साक्षात्कार करनेवाला सत् विद्यमान तत्त्व है। उस सत् में सर्वस्व है; स्वानुभव में उसकी सिद्धि है। स्वानुभूतिरूप जिनशासन जयवंत है।

उस शासन में के प्रणेता तीर्थंकरों को नमस्कार हो!

वीर सं. 2500
फाल्गुन
मार्च 1974

आत्मधर्म

वर्ष 29 वाँ
अंक 11

सह सम्पादक : ब्रह्मचारी गुलाबचन्द जैन

अहा, वीतरागी देव-शास्त्र-गुरु के मंगलमय संदेश को जगत में प्रसारित करनेवाले रत्नत्रय समान तीन शिखरों से शोभायमान इस परमागम-मंदिर का आज मंगल उद्घाटन हुआ है। भव्य जीवों! आओ... आओ! आनंदपूर्वक आओ... और परमागम में भरे हुए वीतरागी शांत चैतन्यरस का पान करो... आनंद से पान करो!

पूज्य स्वामीजी कहते हैं कि अहो! 'विपुलाचल' से वीरनाथ भगवान ने जो विमल संदेश दिया वही संदेश कुन्दकुन्दाचार्यदेव ने परमागम द्वारा जगत को दिया है। अहा! आत्मा का आनंद जिससे प्राप्त हो ऐसे वीरनाथ का मार्ग जयवंत है।

महावीर भगवान कह गये जो निज-आतम ध्योगा।
भेदज्ञान निज-पर विवेक से शुद्ध चिदानंद पायेगा॥

धर्मवृद्धिकर वर्द्धमानदेव

प्रणमन करूँ मैं धर्मकर्ता तीर्थ श्री वर्द्धमान को

जिनके निर्वाण–महोत्सव का 2500 वाँ वर्ष चल रहा है, ऐसे श्री महावीर भगवान (ऊँचाई 63 इंच) सोनगढ़ में निर्मित परमागम–मंदिर में विराजमान हैं; उन प्रभु के पंचकल्याणक का मंगल–उत्सव आनंदपूर्वक समाप्त हुआ है।

नमः श्री वर्द्धमानाय निर्द्धूत कलिलात्मने।
सालोकानां त्रिलोकानां यत्‌विद्यादर्पणायते॥

श्री समंतभद्रस्वामी इस स्तुति में कहते हैं कि जिन्होंने आत्मा के कलंक को धो दिया है और जिनकी केवलज्ञानविद्या में तीनों लोक तथा अलोक दर्पणवत् प्रतिभासित होते हैं, ऐसे श्री वर्द्धमान स्वामी को नमस्कार हो।

हे भगवान! सम्यग्दृष्टि ही आपके सच्चे स्वरूप को पहिचानकर पूजता है। मिथ्यादृष्टि आपको नहीं पहिचानता। पहिचाने तो मिथ्यात्व नहीं रहता; एक ही चित्त में आपके और मिथ्यात्व के साथ रहने में विरोध है।

परमागम के प्रणेता प्रभु! पधारो... पधारो!

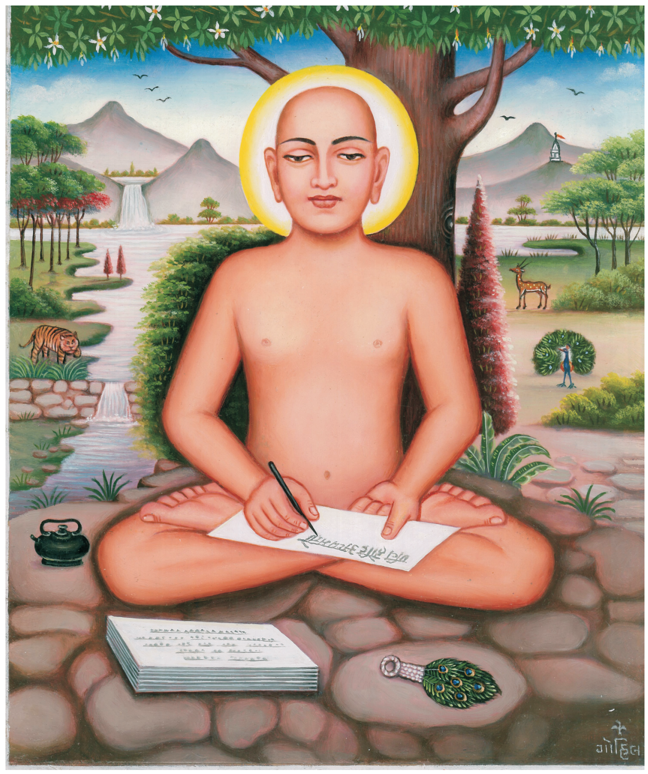

अहा, हे शुद्धोपयोगी संत प्रभु कुन्दकुन्दस्वामी!

जिसप्रकार प्रवचनसार-परमागम में, मोक्षलक्ष्मी के स्वयंवर-मंडप में शुद्धोपयोग के द्वारा पंचपरमेश्ठी भगवंतों का साक्षात्कार करके आपने उन्हें अद्वैत नमस्कार किया है और इसप्रकार अपूर्व मंगलाचरण किया है, उसीप्रकार—

—इस परमागममंदिर के मंगल-महोत्सव में आप साक्षात् पधारे हो, और आप परमागममंदिर में विराजमान हो, प्रभु! आपके द्वारा दिये हुए शुद्धात्मप्रसाद के द्वारा आपका साक्षात्कार करके स्वामीजी और सब भक्तजन आपका मंगल स्वागत करते हैं...

"पधारो... जिनराज... पधारो!"

आपके शासन की पूज्य स्वामीजी द्वारा अपूर्व महान प्रभावना हो रही है।

श्री महावीर भगवान के 2500 वें निर्वाण-महोत्सव-वर्ष में निर्मित

परमागम-मंदिर

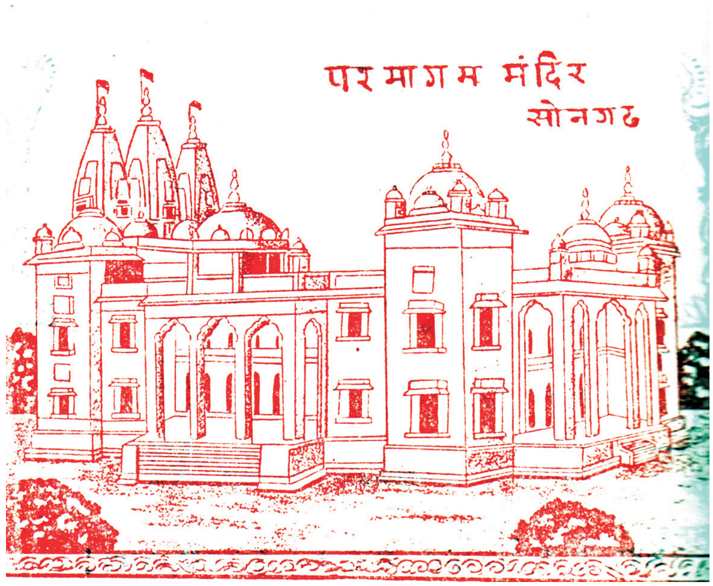

''मंगल-उत्सव आज ही प्रारंभ करो''

भारत में अद्वितीय भव्य परमागममंदिर सोनगढ़ में निर्मित हुआ है। उसका मंगल-महोत्सव पिछले दिनों आनंद से मनाया गया। इस मंदिर में कौन विराजमान हैं?

❀ ढाई हजार वर्ष पहले जिनके श्रीमुख से वीतरागी परमागम प्रवाहित हुआ था, ऐसे महावीर भगवान इस परमागममंदिर में विराजमान हैं। अहा! कैसी अद्भुत शांत गंभीर उनकी मुद्रा है! आनंदमय आत्मा की झलक वहाँ दृष्टिगोचर होती है।

❀ श्री जिनवाणी का साक्षात् श्रवण करके और उसे समयसारादि परमागम में गूँथकर उसके द्वारा जिन्होंने भव्य जीवों को परम आनंद की भेंट दी है, ऐसे कुन्दकुन्दस्वामी भी परमागममंदिर में विराजमान हैं।

❀ जैनशासन के अमूल्य आभूषण समान समयसारादि पाँच परमागम संगमरमर के सिंहासनों में विराजमान हैं।

❀ कुन्दकुन्दस्वामी के पवित्र चरण–चिह्न शोभायमान हैं।

❀ संगमरमर के 450 प्रस्तरों पर इटली से आई हुई मशीन द्वारा उत्कीर्ण पाँच परमागम वीतरागी झलक द्वारा परमागममंदिर को शोभायमान कर रहे हैं और जगत को वीतराग मार्ग का संदेश दे रहे हैं। कुछ गाथायें सुवर्ण अंकित हैं।

❀ तीर्थंकर के पूर्व भवों के तथा अनेक वीतरागी संतों के वैराग्यरसपूर्ण पचास चित्र आत्मिक–आराधना की प्रेरणा दे रहे हैं।

❀ चारों ओर सुंदर कलात्मक ढंग से बने हुए भव्य मंदिर के सुनहरे शिखरों पर जैनधर्म की विजय–पताकाएँ लहरा रही हैं। मंदिर पर कुल 19 कलश हैं।

❀ जैनधर्म के देव–गुरु–शास्त्र का ऐसा त्रिवेणीसंगम देखकर मुमुक्षुओं के आत्मा को प्रसन्नता होती है और रत्नत्रयमार्ग में उत्साह जागृत होता है। स्वामीजी के श्रीमुख से रत्नत्रय मार्ग का ऐसा स्वरूप सुनकर मुमुक्षु जीव आनंद से चैतन्य की आराधना करते हैं।

❀ परमागम का वीतरागी संदेश श्रवण करने के लिये आप भी सोनगढ़ पधारो, और जीवन में अमूल्य लाभ लो।

❀ भाई, समस्त संतों द्वारा कही हुई बात को स्वामीजी भी बारंबार कह रहे हैं; उस महत्व की बात को बराबर ध्यान में रखना कि वीतरागभाव द्वारा शुद्धात्मतत्त्व की उपासना, वह सर्व जिनागम का सार है... वही सच्चा धार्मिक उत्सव है...वही देव–गुरु की आज्ञा है और वही मुमुक्षु का जीवन है। आत्मा में ऐसी आराधना का मंगल–महोत्सव 'आज ही' प्रारंभ करो।

''आराधना ही मोक्ष का महोत्सव है''

"मंगल आत्मा गुरुदेव"

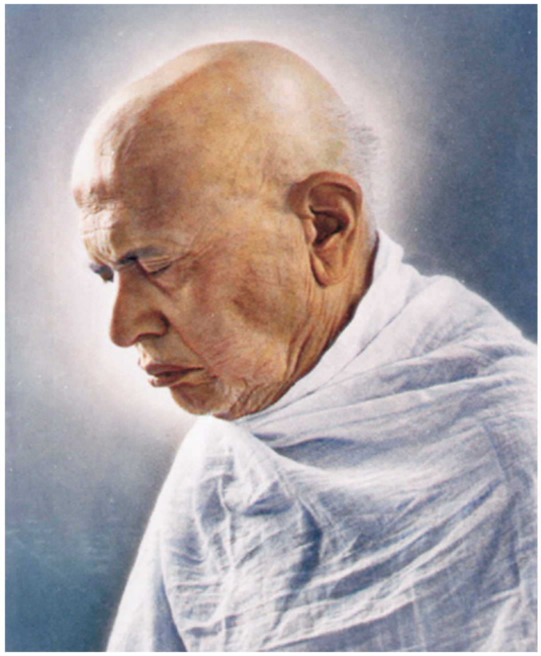

हे गुरुदेव! वीरनाथ प्रभु के मार्ग में कुन्दकुन्द प्रभु के शासन की अद्वितीय प्रभावना करके आप हमारे ऊपर जो महान उपकार कर रहे हैं, उसे देखकर विदेह के समवसरण की बात का स्मरण होता है। आप जैसे 'मंगल' आत्मा के सेवन से हमें भी मंगल की प्राप्ति हुई है।

अहा, महावीर भगवान के मोक्षगमन के इस ढाई हजारवें वर्ष में उनके मंगल पंचकल्याणक मनाने का सौभाग्य आपके प्रताप से हमें प्राप्त हुआ है। प्रभु का मार्ग आपने हमें दिया है, और आप हमें प्रतिदिन जिनवाणीरूपी अमृत का पान करा रहे हैं। वर्तमान में आपकी छाया में 'स्थापना-निक्षेप' से पंचकल्याणक प्रत्यक्ष देख रहे हैं; कुछ काल पश्चात् आपकी छाया में 'भाव-निक्षेप' से पंचकल्याणक देखेंगे। अहा, धन्य होगा वह अवसर!

आत्महितकारी पंचकल्याणक जयवंत हो।

11 कुमारिका बहिनों द्वारा अंगीकार की गई ब्रह्मचर्य दीक्षा

पूज्य स्वामीजी के समक्ष निम्नोक्त 11 बहिनों ने आत्महित के लिये आजीवन ब्रह्मचर्य प्रतिज्ञा अंगीकार की है:—

1. उषाबहिन (बृजलाल जीवणलाल सेठ की सुपुत्री, S.S.C. उम्र 30) अहमदाबाद
2. मधुबहिन (मनसुखलाल छोटालाल की सुपुत्री, B.A. उम्र 30) बम्बई
3. सुमित्राबहिन (भाईलाल घेलाभाई की सुपुत्री, S.S.C. उम्र 30) मद्रास
4. जिनमतीबहिन (छोटालाल रायचंद की सुपुत्री, B.A. उम्र 28) चुडा
5. गुणवंतीबहिन (पापाचंद गोविन्दजी की सुपुत्री, S.S.C. उम्र 27) अडताला
6. लताबहिन (पोपटलाल छगनलाल की सुपुत्री, S.S.C. उम्र 27) लिंबडी
7. नीलाबहिन (त्रंबकलाल हिम्मतलाल की सुपुत्री, S.S.C. उम्र 27) सुरेन्द्रनगर
8. विमलाबहिन (रिखवदास कपूरचंद की सुपुत्री, S.S.C. उम्र 26) बम्बई
9. सुलोचनाबहिन (शांतिलाल गीरधरलाल की सुपुत्री, S.S.C. उम्र 25) सोनगढ़
10. मालतीबहिन (हिम्मतलाल हरगोविंददास की सुपुत्री, B.A. उम्र 24) भावनगर
11. पुष्पलताबहिन (फूलचंदजी झांझरी की सुपुत्री, B.A. उम्र 21) उज्जैन

यह सब सुशिक्षित बहिनें जैनधर्म के उत्तम संस्कार युक्त हैं; अनेक वर्षों से तत्त्वज्ञान का अभ्यास करती हैं। स्वामीजी के प्रवचन में अध्यात्म-रस की जो शांतधारा प्रवाहित होती है—उसकी मधुरता के समक्ष सांसारिक विषय अत्यंत नीरस हैं—ऐसा समझकर, चैतन्यरस की साधना के लिये जीवन व्यतीत करने की भावना उन्हें जागृत हुई है। पवित्रात्मा पूज्य बहिनश्री-बहिन की मंगल छाया में अनेक वर्षों तक रहकर आत्महित की प्रेरणा प्राप्त की है; और वैराग्यपूर्वक, जीवन में निवृत्तिपूर्वक आत्महित की साधना करें—ऐसी भावना से उन बहिनों ने ब्रह्मचर्यप्रतिज्ञा अंगीकार की है। मुमुक्षु के जीवन में जो सत्य ध्येय है, उस ध्येय के

मार्ग पर अग्रसर होकर यह सब ब्रह्मचारी बहिनें अपना आत्महित शीघ्र प्राप्त करें—ऐसी शुभेच्छा के साथ बहिनों को धन्यवाद!

ब्रह्मचर्य–प्रतिज्ञा ग्रहण कराते हुए स्वामीजी ने कहा कि—आज यह 11 कुमारिका बहिनें ब्रह्मचर्य प्रतिज्ञा लेती हैं। 51 बहिनें पहले प्रतिज्ञा ले चुकी हैं और आज यह 11 बहिनें ले रही हैं; इसप्रकार कुल 62 बहिनें हुई हैं। यह सब प्रताप चंपाबहिन का है—ऐसा कहकर स्वामीजी ने पूज्य बहिनश्री चंपाबहिन की अंतरंग आत्मदशा की महिमा प्रसिद्ध की; जिसे सुनकर सभाजनों को बड़ी प्रसन्नता हुई थी। पश्चात् श्री पंडित हिम्मतलाल जे. शाह ने समाज की ओर से ब्रह्मचारी बहिनों को अभिनंदन देते हुए कहा कि—बहिनों! आपका ध्येय महान है... श्री वीरप्रभु के वीतरागमार्ग पर हम सबको चलना है... इसलिये राग–द्वेष के किसी भी प्रसंग में कहीं रुके बिना, संतों ने हमें जो पवित्र चैतन्यतत्त्व बतलाया है, उस परमब्रह्म चैतन्यतत्त्व के ध्येयपूर्वक आनंदमय आत्मजीवन प्राप्त करना। —ब्रह्मचारी हरिलाल जैन

उपरोक्त 11 ब्रह्मचारिणी बहिनों का चित्र 'आत्मधर्म' के आगामी अंक में दिया जायेगा।

दिव्यध्वनि के द्वारा मोक्षपुरी का मंगल द्वार
खोलनेवाले और भव्य जीवों के अंतर में
भावश्रुत का दीपक प्रज्वलित करनेवाले
त्रिकालवर्ती तीर्थंकर भगवंत!
हमारे घर
पधारो... पधारो... पधारो!

परमागम का मधुर प्रसाद

[10]

[अंक 344 से आगे]

अहा, जिनमार्ग का इष्ट-उपदेश सभी जीवों का हित करनेवाला है; वीतरागी आचार्यों की परंपरा से शुद्ध जिनमार्ग का जो उपदेश चला आ रहा है, उसी का इन परमागमों में कुन्दकुन्दस्वामी ने संग्रह किया है। यह उपदेश आत्मा के शुद्धस्वरूप को बतलाकर जीव का हित करनेवाला है। ऐसे हितकारी परमागम सोनगढ़ के परमागम-मंदिर में उत्कीर्ण हो गये हैं, और उनका भाव धर्मी के अंतर में उत्कीर्ण हो गया है। ऐसे परमागम का मधुर प्रसाद गुरुदेव हमें प्रतिदिन दे रहे हैं... और आत्मधर्म द्वारा आप सब आनंद से उसे पढ़ रहे हो।

अहा, अद्भुत हितकारी जिनमार्ग!
उसका बोध सभी को हितकर है; उसका सेवन करो।

बोधप्राभृत के प्रारंभ में द्वादशांग के पाठी शुद्ध सम्यक्त्व-संयम सहित और कषाय रहित ऐसे भावलिंगी आचार्यों को वंदन करके, कुन्दकुन्दस्वामी कहते हैं कि—अहो! जिनवरदेव ने सभी जीवों को हितरूप ऐसे सम्यग्ज्ञान की प्राप्ति के लिए जो उपदेश दिया, वही मैं इस बोधप्राभृत में कहूँगा। यह उपदेश कैसा है ? छह काय जीवों को हितरूप है; जो छह काय के जीवों की हिंसा से रहित है, इसलिये उन्हें सुखकर है। जिनमार्ग में कथित ऐसा उत्तम वीतरागी बोध मैं इस अधिकार में कहूँगा, उसे हे भव्य जीवो! तुम आदरपूर्वक सुनो, पश्चात् उस भाव का मनन करने से तुम्हारे बोध की शुद्धि होगी।

जिनशासन सभी भावों का ज्ञान कराके शुद्ध भावों का ग्रहण व हिंसादि अशुद्धभावों का त्याग कराता है। पापभावों का तथा पाप के स्थानों का ज्ञान कराता है, किंतु उस पाप का पोषण कभी नहीं करता; पाप का त्याग करायेगा, ऐसा जिनमार्ग में सर्वत्र वीतरागभाव का ही तात्पर्य

है, कहीं भी हिंसादि का पोषण उसमें नहीं है; ऐसा शुद्ध जिनउपदेश वीतरागी आचार्यों की परंपरा से चला आ रहा है, उसी का इस परमागम में कुन्दकुन्दस्वामी ने संग्रह किया है। ऐसा हितकारी उपदेश यहाँ (सोनगढ़ में) परमागममंदिर में उत्कीर्ण हुआ है; उसका भाव धर्मी के आत्मा में उत्कीर्ण है।

अहा! यह उपदेश जीवों को धर्ममार्ग में सावधान कराता है व कुमार्ग से पृथक् है। अत: हे भव्य जीवो! तुम इस उपदेश का श्रवण करो।

धर्म का आयतन क्या है? वास्तव में सम्यक्त्वादि वीतरागधर्मरूप परिणमित आत्मा, वह स्वयं धर्म का आश्रय, अर्थात् स्थान है; व्यवहार में जिनमंदिर धर्म का स्थान है। उसमें वीतराग जिनबिंब की ही स्थापना होती है। जैसे धर्म वीतराग है, उसीप्रकार उसकी स्थापनारूप प्रतिमा आदि भी वीतराग होती है, राग के चिह्न उसमें नहीं होते। ऐसे जिनमार्ग को हे भव्य जीवो! तुम पहिचानो तथा उससे विपरीत ऐसे कुमार्ग से दूर हो।

धर्म का वास्तविक आयतन जो अपना आत्मा है, उसे भूलकर मात्र बाह्य आयतन के सेवन से धर्म की प्राप्ति नहीं होती। बाह्य से धर्म की प्राप्ति कैसे होगी? अनंत गुणों का धाम ऐसा आत्मा धर्म का स्थान है, उसके सेवन से सम्यक्त्वादि धर्म की प्राप्ति होती है। मोक्षमार्ग स्वद्रव्य के आश्रय से प्रगट होता है, पर के आश्रय से प्रगट नहीं होता।

❀ मोक्षमार्ग निर्ग्रंथ है ❀

सूत्रप्राभृत की 22 वीं गाथा में आचार्यदेव कहते हैं कि—नग्न मुनि का स्वरूप ही मोक्षमार्ग है, शेष सभी उन्मार्ग है। जिनशासन में वस्त्रधारी जीव को मुक्ति नहीं है—फिर भले तीर्थंकर हों;—जब तक वे वस्त्रसहित हैं और नग्न-मुनिदशा अंगीकार नहीं करते, तब तक वे भी मुक्त नहीं होते हैं। वस्त्रसहित दशा में सम्यग्दर्शन हो सकता है, किंतु मुनिदशा नहीं हो सकती। वस्त्रसहित स्थिति में मुनिपना मानना, वह सन्मार्ग की नहीं लेकिन उन्मार्ग की श्रद्धा है, तीर्थंकरों के वीतरागी मार्ग का उसे ज्ञान नहीं है।

रे नग्न मुनिमार्ग है... शेष सभी उन्मार्ग है।
णग्गो विमोक्खमग्गो सेषा उम्मगया सव्वे।

चारित्रप्राभृत, गाथा 39 में कहते हैं कि—

जीव-अजीव का भेदरूप सम्यग्ज्ञान, और रागादि दोष रहित वीतरागता, वह मोक्ष का प्रसिद्ध मार्ग है। वीतराग-विज्ञान को मोक्षमार्ग कहा है, उसमें ऐसा विज्ञान एवं वीतरागता होती है। सम्यग्ज्ञान के बिना चारित्र नहीं तथा चारित्र के बिना मोक्ष नहीं होता।

— चारित्र कैसा है ?—कि राग से रहित (राग, वह चारित्र नहीं है)

— ज्ञान कैसा ?—कि जीव और अजीव दोनों के भिन्न-भिन्न स्वरूप को जाननेवाला सम्यग्ज्ञान (मात्र बाह्य ज्ञानपना, वह ज्ञान नहीं है)

ऐसा ज्ञान व चारित्र मोक्षमार्ग है। सम्यग्ज्ञान के साथ सम्यग्दर्शन आता ही है; इसप्रकार सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्ररूप मोक्षमार्ग है। ऐसा मोक्षमार्ग हो, वहाँ बाह्य में नग्नता होती है। श्रीमद् राजचंद्रजी ऐसे मोक्षमार्ग की भावना भाते हुए कहते हैं कि—'कब होवेंगे बाह्यांतर निर्ग्रंथ जो' इसमें अंतर और बाह्य दोनों प्रकार से निर्ग्रंथ होने की भावना है।

चैतन्यस्वरूप आत्मा वही वास्तविक चैत्य;
वह जिसमें विराजमान है वह वास्तविक चैत्यालय।

'चैत्य' अर्थात् ज्ञान; वह जिसमें रहे, वह 'चैत्यगृह' है। मुनि आदि धर्मी जीवों की आत्मा में शुद्ध ज्ञानरूप चैत्य विराजमान हैं, इसलिये वह आत्मा ही चैत्य-गृह है। परमार्थ से सभी आत्मा चैत्यस्वरूप-चेतनास्वरूप है, इसलिये वह सभी चैत्यगृह हैं; ऐसे आत्मा के अनुभवरूप ज्ञानचेतना जिसके अंतर में वर्तती है, वह जीव परमार्थ चैत्य है। यह 'भावचैत्य' है; तथा मंदिर आदि में चैत्य (जिनप्रतिमा) की स्थापना, वह स्थापना-चैत्य है, वह व्यवहार है। दोनों को जैसा है, वैसा जानना चाहिए।

चैत्यस्वरूप भगवान आत्मा है, उसे जानकर आदर करे, वह जीव सुख एवं मोक्ष को प्राप्त होता है। और चैत्यस्वरूप आत्मा को जो नहीं जानता, और उसका विरोध करता है, वह जीव दु:ख एवं बंध को प्राप्त होता है। चैतन्यस्वरूप आत्मा के सेवन से जीव को सुख का अनुभव होता है, उससे प्रतिकूल वर्ते, उसे दु:ख का अनुभव होता है।

परमार्थ चैत्यगृह तो ज्ञानस्वरूप आत्मा है, तथा व्यवहार में उसकी स्थापनारूप चैत्य-मंदिर (जिनमंदिर) आदि होते हैं; उस 'स्थापना' को न जाने तो उसका ज्ञान भी सच्चा नहीं है। सम्यग्ज्ञान के विषय में नाम-स्थापना-द्रव्य और भाव ये चार निक्षेप मानना चाहिये। उसका जो

निषेध करता है, उसे सम्यग्ज्ञान नहीं है। अर्थात् स्थापना-निक्षेप में भी जिनबिंब होते हैं, उन्हें धर्मी जीव यथार्थ जैसा है, वैसा स्वीकार करते हैं। किंतु उससे ऐसा नहीं समझना कि उस पर के आश्रय से सम्यग्दर्शनादि हो जाते हैं। सम्यग्दर्शनादि तो स्वद्रव्य के आश्रय से ही होते हैं; जिनप्रतिमा आदि परद्रव्यों के आश्रय से तो शुभराग होता है, उससे जिनशासन में पुण्यबंध कहा है; उसे मोक्ष का कारण नहीं कहा है। मोक्ष का कारण तो मोह-राग-द्वेष रहित वीतरागभाव है, ऐसे वीतरागधर्म में किसी प्रकार से किसी जीव की हिंसा नहीं है; इसलिये वह परम अहिंसा धर्म है। शुभराग की क्रियाओं में तो कुछ सावद्यपना भी संभव है; वह कुछ निश्चयधर्म नहीं है। राग से भिन्न ऐसी शुद्धज्ञानचेतना जिस आत्मा में विराजमान है, वह आत्मा स्वयं जीवंत-चैत्यगृह है।

धर्मात्मा मुनि स्व तथा पर के आत्मा को चैतन्यस्वरूप जानते हैं। शुद्ध रत्नत्रयरूप परिणमित चलते-फिरते मुनिवर, वे 'जिन-प्रतिमा' हैं, 'जिनेंद्रदेव' के समान निर्ग्रंथ स्वरूप में वे विचरते हैं। ऐसी दशा का स्मरण करके उसकी भावना से श्रीमद् राजचंद्र लिखते हैं कि 'हे चैतन्य! जिनप्रतिमा बन... जिनप्रतिमा बन ?'

अहो, मुनि तो रत्नत्रय की साक्षात् मूर्ति हैं, वह वंदनीय है। शांत चैतन्यप्रतिमा बनकर वे उपशांतरस में लीन हुए हैं, आत्मा के असंख्य प्रदेशों में चैतन्य का शांत उपशमरस झर रहा है! ऐसे वीतरागी मुनि की बाह्य आकृति भी जिनदेव जैसी वीतराग-दिगंबर होती है, रागरूप नहीं होती है—ऐसा व्यवहार जिनमत में है, उनकी स्थापनारूप प्रतिमा भी वैसी ही वीतराग मुद्रावाली होती है।

❀ जिन-प्रतिमा जिन-सारखी... भाखी आगममांय ❀

जो शुद्ध रत्नत्रयस्वरूप हुए हैं, तथा जिसने मोह पर विजय प्राप्त की है, वह आत्मा स्वयं 'जिनमूर्ति' है, वह जैन-प्रतिमा है। 'हे चैतन्य! तू जिनप्रतिमा बन!' अर्थात् चैतन्यस्वभाव में अंतर्मुख होकर वीतराग रत्नत्रयरूप परिणमन कर।

जिनप्रतिमा अर्थात् केवली भगवान, वे अनंत चतुष्टय युक्त तेरहवें गुणस्थान में विराजमान हैं, उन्हें शाश्वत सुख प्रगट हुआ है, जगत के किसी भी पदार्थ की उपमा उन्हें नहीं दी जा सकती है, जगत की किसी भी घटना से जिन्हें कभी क्षोभ नहीं होता, ऐसे क्षोभ रहित

निश्चय-सागर समान गंभीर ऐसे अनंत गुणसंपन्न अरिहंत परमात्मा, वे साक्षात् चैतन्यमय जिनप्रतिमा हैं; उसीप्रकार देहरहित ऐसे सिद्ध भगवान भी (समस्त गुणयुक्त) साक्षात् जिनप्रतिमा है। चैतन्यस्वरूप ऐसी जिनप्रतिमा को पहिचानकर मूर्ति में जो स्थापना करने में आती है, वह भी वीतरागता को ही दर्शानेवाली होती है, उसे वस्त्र-आभूषण या फूल-हार नहीं होते।

आत्मा का रागादि से भिन्न चैतन्यमय परिणमन, वह जिनप्रतिमा की सच्ची उपासना है। क्योंकि वास्तविक जिनप्रतिमा चैतन्यबिंबरूप है; और पाषाण प्रतिमा में उसकी स्थापना, वह व्यवहार है, शुभराग में वह भी पूज्य है। वीतरागता में तो बाह्य आलंबन न रहकर आत्मा स्वयं ही चैतन्यभावरूप जिनप्रतिमा हुआ है... वह स्वयं में लीन होकर स्वयं की आराधना करता है।

अरिहंत परमात्मा भी निश्चय से केवलज्ञानरूप परिणमित हुए हैं, वे निश्चय-जिन हैं; तथा उनका शरीर या प्रतिमादि में स्थापना करना, वह व्यवहारजिन है। अरिहंत के शुद्ध द्रव्य-गुण-पर्याय को जो वास्तव में पहिचानता है, उसे रागरहित चैतन्यस्वरूप आत्मा की पहिचान हो जाती है।

'अरिहंत-जिन' की ऐसी सच्ची पहिचान सम्यग्दृष्टि को ही होती है। उसके भानपूर्वक जो जिनप्रतिमा वीतरागमुद्रा दर्शक होती है, वह व्यवहार में वंदनीय होती है, वह शुभभाव है। इसप्रकार निश्चय और व्यवहार दोनों एकसाथ धर्मी को होते हैं।

निश्चय और व्यवहार दोनों एक नहीं किंतु भिन्न-भिन्न हैं, लेकिन वह दोनों एकसाथ रह सकते हैं। दोनों का स्वरूप भिन्न-भिन्न होने पर भी एकसाथ रहने में कोई विरोध नहीं है, अर्थात्—

जहाँ शुद्धात्मा की ज्ञानदशा (रागरहित) प्रगट हुई हो, वहाँ राग सर्वथा होता ही नहीं—ऐसा नहीं है।

तथा जहाँ राग हो, वहाँ शुद्धात्मा का ज्ञान होता ही नहीं—ऐसा भी नहीं है।

धर्मी-साधक को शुद्धात्मा का ज्ञान व राग दोनों साथ में वर्तते रहते हैं—उसमें जो शुद्धज्ञान है, वह तो मोक्ष का कारण है, तथा जो राग है, वह कर्मबंध का कारण होता है। इसप्रकार एक पर्याय में दोनों साथ में वर्तते होने पर भी दोनों का स्वरूप भिन्न है—कार्य भिन्न है। इसका वर्णन समयसार के 110वें कलश में आचार्यदेव ने निम्नानुसार किया है—

जब तक ज्ञान की कर्मविरति बराबर परिपूर्णता को प्राप्त नहीं होती, तब तक कर्म और ज्ञान का एकत्व शास्त्र में कहा है; उनके साथ रहने में कुछ भी क्षति अर्थात् विरोध नहीं है, परंतु उसमें जो कर्म है, वह बंध का कारण है और मोक्ष का कारण एक परम ज्ञान है, वह ज्ञान स्वयं कर्म से भिन्न मुक्त ही है।

❀ पंचम काल में 'जिन' का विरह हमें नहीं है। ❀

साक्षात् जिन तीर्थंकर जीवंत प्रतिमा के रूप में भरतक्षेत्र में विचरकर उपदेश देते थे। 2500 वर्ष पूर्व महावीर प्रभु मोक्ष पधारे; पश्चात् गौतमस्वामी, कुन्दकुन्दस्वामी आदि वीतरागी संतों ने तीर्थंकरों के उपदेश की परंपरा आज तक चालू रखकर जैनशासन को टिका रखा है। अहा, महाभाग्य से आज हमें ऐसा वीतरागमार्ग प्राप्त हुआ है! ऐसे मार्ग को टिकानेवाले वीतरागी संत भी 'जिनप्रतिमा' हैं। 'जिन' का और संतों का उपदेश एक ही प्रकार का है, उसमें अंतर नहीं है। अहो, साक्षात् 'जिन' के समान ऐसे संत भी पूज्य हैं। तीर्थंकरों का विरह इन संतों ने भुलाकर उनके उपदेश का साक्षात्कार कराया है, इसलिये साधक कहता है कि अहो, संतों के प्रताप से इस पंचमकाल में हमें 'जिन' का मार्ग प्राप्त हुआ है अर्थात् पंचमकाल में भी 'जिन' का विहर हमें नहीं है, अहा, ऐसे संतों को पहिचानकर उनका सर्व प्रकार से आदर-बहुमान करो।

'जिन' कैसे हैं? 'जिन' तो ज्ञानचेतनामय हैं, ऐसी 'जिन' की पहिचान करने से ज्ञान राग से भिन्न होकर अंतर्मुख होता है!

"आत्म-भाषा"

आचार्य भगवान ने स्वानुभव के मंथन द्वारा आत्मा की एक-एक शक्ति को व्यक्त किया है, प्रत्येक शक्ति के वर्णन में स्वानुभव का रस प्रवाहित किया है, यह है वीतरागी संतों की वाणी! यह 'आत्मभाषा' है। वाणी तो यद्यपि जड़ है परंतु जिसमें आत्मानुभव निमित्त है—ऐसी संतों की भाषा वह 'आत्मभाषा' है। उस भाव को जो समझेगा, उसे अपूर्व आत्मा का जीवन प्रगट होगा।

श्री जिनवाणी-समाचार

अहा, समयसार तो साधक जीव के हृदय का प्राण और आत्मा को देखने की आँख है।

17 वीं बार समयसार की समाप्ति

फाल्गुन शुक्ला 13 को परमागम-मंदिर का भव्य प्रतिष्ठा-महोत्सव आनंद से पूर्ण हुआ। दूसरे दिन परमागम-भक्ति के आनंदमय वातावरण में, प्रवचन में समयसार का 17वीं बार वांचन पूर्ण हुआ... गुरुगम से इसके अभ्यास का फल आत्मा के परम आनंद का अनुभव है—ऐसे आशीर्वादपूर्वक समयसार समाप्त हुआ—

यह समयप्राभृत पठन करके जान अर्थ रु तत्त्व से।
ठहरे अरथ में जीव जो वो, सौख्य उत्तम परिणमे ॥415 ॥

अहा, परमागम के अभ्यास का कैसा उत्तम फल आचार्यदेव ने बताया है ? अनेक भव्य जीव ऐसे उत्तम फल को प्राप्त हुए हैं—हो रहे हैं और प्राप्त होंगे। ऐसा परमागम जगत में जयवंत वर्तो... 'धन्य दिव्यवाणी ॐकार को... जिसने प्रगट किया आत्मदेव, जिनवाणी जयवंत तीन लोक में रे...'

प्रतिष्ठा-महोत्सव अत्यंत उल्लास से पूर्ण हुआ और उसके साथ ही साथ समयसार पर 17वीं बार प्रवचन भी पूरे हुए। अहो, समयसार! तुम तो साधक जीव के हृदय के प्राण हो, आत्मा को देखने के लिये तुम नेत्र हो... तुमारे भाव का भासन होने से हमें तो कुन्दकुन्दस्वामी तथा सीमंधरादि जिनेश्वरों का ही साक्षात् दर्शन हो गया है। इस पंचम काल में आप जिनशासन के भंडार हो... भव्य जीवों को उत्तम आत्मिकसुख देनेवाले समयसार जयवंत वर्तो।

पश्चात् दूसरे दिन से 'कलश-टीका' पर स्वामीजी के भावपूर्ण प्रवचन प्रारंभ हुआ। कलश-टीका भी समयसार का दोहन है। अध्यात्मरस के मंथनपूर्वक स्वामीजी का प्रवचन चल रहा है।

पूज्य गुरुदेव सुख-शांति में विराजमान हैं। सभी कार्यक्रम व्यवस्थित नियमित

शांतिपूर्वक आनंदमय वातावरण में चल रहे हैं। जहाँ अध्यात्म की चर्चा और चैतन्यरस का घोलन है, वहाँ तो निरंतर धर्म का महोत्सव चल रहा है; अर्थात् अपना तो अभी भी दिन-रात निरंतर महोत्सव चालू ही है, और मोक्ष प्राप्ति तक साधकभाव का आनंदोत्सव अखंडरूप से चलता रहेगा। अहो, श्री जिनेन्द्रशासन जयवंत वर्तो—कि जिसके सेवन से आनंदमय मोक्षमार्ग की प्राप्ति होती है।

जिनभगवान कथित शुद्ध स्व-द्रव्य जिसके आश्रय से मोक्षसुख की प्राप्ति होती है

कर्मरहित, अनुपम, नित्य ज्ञानस्वरूप शुद्धात्मा वह स्व-द्रव्य है।

[फाल्गुन शुक्ला 15, मोक्षप्राभृत, गाथा-18]

स्वद्रव्य के आश्रय से सुगति है, और परद्रव्य के आश्रय से दुर्गति है—
यह भगवान महावीर प्रभु के सिद्धांत का सार है।
सुगति अर्थात् मोक्ष; शुद्ध परिणमन।
दुर्गति अर्थात् संसार; विकार परिणमन।
स्वद्रव्य अर्थात् ज्ञानस्वरूप आत्मा;
ज्ञानस्वरूप से भिन्न वह सब परद्रव्य है।

❀ शुद्ध स्वद्रव्य में लीनता छोड़कर जितना परद्रव्य का आश्रय है, उतना राग है।

❀ जितना राग है, उतना दुःख है; तथा दुःख का नाम ही दुर्गति है।

❀ जितना स्वद्रव्य का आश्रय है, उतना सुख है, वह सुगति है, उसमें राग या दुःख नहीं है।

❀ भगवान ने स्वद्रव्य के आश्रय से मोक्षसुख कहा है।

❀ मोक्षमार्ग स्वद्रव्य के आश्रय से होता है।

❀ सम्यग्दर्शन भी स्वद्रव्य के आश्रय से ही होता है।

'मुनिराज जो निश्चयनयाश्रित, मोक्ष की प्राप्ति करे।' (समयसार-272)

'भूतार्थ आश्रित आत्मा, सुदृष्टि निश्चय होय है।' (समयसार-11)

— इसप्रकार भगवान ने स्वद्रव्य के आश्रय से धर्म कहा है।

अब भगवान ने स्वद्रव्य किसे कहा है? यह जानने की जिज्ञासा होने पर श्री कुन्दकुन्दस्वामी उसका उत्तर कहते हैं—

दुट्ठट्ठकम्मरहियं अणोवमं णाणविग्गहं णिच्चं।
सुद्धं जिणेहिं कहियं अप्पाणं हवदि सद्दव्वं॥18॥

जो नित्य ज्ञानस्वरूप है, दुष्टाष्ट-कर्म विहीन है;
जिनवरकथित अनुपम अहो! स्वद्रव्य वह शुद्धात्म है॥18॥

नित्य उपयोगस्वरूप आत्मा है, वह अनुपम है, वह स्वतत्त्व है, उसकी सन्मुखता से वीतरागभाव होता है, तथा विकार और आठ कर्मों का नाश होता है। इसलिये स्वद्रव्य को जानकर उसका आश्रय करना, वही मुमुक्षु का कर्तव्य है, और वही परमागम की आज्ञा है।

उपयोगस्वरूप शुद्धात्मा को जानकर श्रद्धा-ज्ञानपूर्वक उसमें स्थिरता करे, उस जीव ने अपने चैतन्यमंदिर में आनंद से भावश्रुत की प्रतिष्ठा की। जिसे कल्याण करना हो, उसके लिये भगवान का यह संदेश कुन्दकुन्दाचार्यदेव ने परमागम द्वारा दिया है कि हे भव्य जीवो! राग से पार ऐसा जो शुद्ध-अनुपम-चैतन्यतत्त्व है, वह तुम्हारा स्वद्रव्य है और उसी का तुम आश्रय करो; इसके अतिरिक्त समस्त परद्रवय या परभावों को स्व से भिन्न जानो। यह कार्य शीघ्र करो, यही इष्टोपदेश है।

अहा, यह आत्मा ही ऐसा सारभूत तत्त्व है कि जिसे जानने से ज्ञाता को सुख प्राप्त हो! आत्मा में सुख है, तथा उसे जानने से सुख का अनुभव होता है; अचेतन में या रागादि अशुद्ध भावों में सुख नहीं है तथा उनके आश्रय से भी सुख प्राप्त नहीं होता। जो शुद्धात्मा को स्वद्रव्य के रूप में जानता है, उसे ही शुद्धता प्रगट होती है; जो अशुद्धरूप से आत्मा को जानता है, उसे अशुद्धता प्रगट होती है। स्वद्रव्य का यथार्थ स्वरूप जीव ने कभी नहीं जाना। इसलिये कहते हैं कि स्वद्रव्य को शीघ्र जानकर उसकी रक्षा करो। ❀❀

प्रणमन करूँ मैं धर्मकर्ता तीर्थ श्री महावीर को

पधारो वीरप्रभु भगवान

[फाल्गुन शुक्ला 1, शनिवार तारीख 23-2-74]

अहा, धर्मवृद्धि-कर्ता भगवान वर्द्धमान! पधारो... पधारो... पधारो! प्रभो! सम्यग्दृष्टि के ही चित्त के विषयभूत ऐसे आपको देखने से अपार हर्ष होता है। आप मात्र हमारी सुवर्णपुरी में ही पधारे हो, इतना ही नहीं किंतु—आप हमारे चित्त-मंदिर में भी पधारे हो। आज का प्रभात सुवर्णपुरी में कोई विशेष सुंदर भासित होता है। मोह के बादल नष्ट होकर आनंदमय प्रकाश फैल रहा है। अहा, आज प्रभु महावीर पधारे हैं। सोनगढ़ के तथा भारत के भक्तजन उनका भव्य स्वागत कर रहे हैं।

सौम्य प्रशांत मुद्रा में चैतन्यतेज से दीप्त प्रतिमा देखकर भक्तजन आनंद से भक्ति गीत गाते हैं—चरणों में तेरे स्वामी मस्तक झुका रहे हैं। इस प्रतिमा की मुद्रा देखते ही केवली प्रभु की मुद्रा का स्मरण होता है अर्थात् वास्तव में अपना सर्वज्ञस्वभाव याद आता है।—यही महोत्सव का महा मंगलाचरण है।

गुरुदेव भी उमंग से स्वागत में पधारे हैं, तथा प्रसन्नता से कहते हैं कि—'आज भगवान पधारे; मुद्रा बहुत अच्छी है; मानो साक्षात् भगवान पधारे हों। धर्मी को भगवान के प्रति अवश्य बहुमान आता है।'

पूज्य बहिनश्री-बहिन भी हृदय की उमंग से मंगल-भक्ति द्वारा प्रभु का स्वागत करती थीं। आज नगर में सर्वत्र आनंद का वातावरण था। मानो प्रभुजी धीरे-धीरे गगन-विहार करके परमागम-मंदिर में पधारते हों—ऐसा आनंदमय स्वागत का दृश्य था। शांतरस झरती प्रभुजी

की भव्य मुद्रा आनंदमय आत्मतत्त्व का उपदेश देती थी कि अहो, भव्य जीवो! कषायरहित आनंदमय चैतन्यतत्त्व को साधकर हम परमात्मा हुए हैं। और तुम भी ऐसे वीर... मार्ग में आओ।

वाह प्रभो! सम्यग्दृष्टि तो आपको देखता ही है, और मिथ्यादृष्टि-भव्य भी जब आपको देखता है, तब उसकी अतीन्द्रिय आँख खुल जाती है और मिथ्यात्व नष्ट हो जाता है। अहा, ऐसे भगवान का स्वागत करने में मुमुक्षुओं को वचनातीत आनंद होता है। कागज और कलम से उसका वर्णन नहीं हो सकता।...

—'तो इसका वर्णन कैसे हो सकता है?' इस बात को गुरुदेव अपने प्रवचनों में समझाते हैं... कि इंद्रियों से पार ऐसे ज्ञानस्वभाव के सन्मुख हो, तो सर्वज्ञ की सच्ची पहिचान होकर तुझे उनके जैसा आनंद का स्वाद आयेगा।

❀ निर्विघ्न मंगल-महोत्सव ❀

उत्सव की तैयारियाँ जोरदार चलती थी... भगवान की प्रतिमा भी जयपुर से रवाना होकर सोनगढ़ के नजदीक आ रही थी... लेकिन...

बीच में उपद्रव आया... दो-तीन दिन तो सभी चिंता में रहे; सभी को विश्वास था कि ऐसे मंगल-उत्सव के समय धर्म पर आया उपद्रव टिक नहीं सकता। सभी दिन-रात जिनदेव की प्रार्थना करते थे। जब वीरनाथ भगवान सोनगढ़ के नजदीक आ गये... तब तो मानो शासन का धर्मचक्र ही दौड़ता चला आ रहा हो, इसप्रकार वातावरण में अचानक परिवर्तन होने लगा... विरोधियों के हृदयों में परिवर्तन होने लगा... तथा फाल्गुन कृष्णा अमावस्या-दोपहर के डेढ़ बजे तो सभी वातावरण शांत हो गया; गुरुदेव के प्रसन्नचित्त उद्गार सुनकर सर्वत्र हर्ष से जयजयकार होने लगा। यह उपद्रव सोनगढ़ के इतिहास में अजोड़ था... तो उसका निवारण होने से सबके हृदय में जो हर्ष हुआ, वह भी अजोड़ था। गाँव के कार्यकर्ता भी उत्सव के प्रति अपनी रुचि व्यक्त करते थे।

पुन: उसकी आनंदमय तैयारियों से सारा सोनगढ़ गूँजने लगा... फाल्गुन शुक्ला 1 को अद्भुत आनंद-हर्षोल्लास से भगवान वर्द्धमान का स्वागत करते समय मुमुक्षुजनों के हृदयों में हर्षोल्लास था; और गाँव के लोग भी अपार हर्ष में मग्न थे। अहो, प्रभु महावीर! अतीन्द्रिय

शांति के पिंड ऐसे आप जहाँ पधारो हो, वहाँ सर्वत्र शांति प्रसरे इमसें क्या आश्चर्य है ?

आज गुरुदेव का दोपहर का प्रवचन भी शांतरस से पूर्ण, वैराग्यमय और चैतन्य के प्रति उल्लास प्रेरक था। अहो, ज्ञानस्वभाव की दृष्टि से तो सभी आत्मा समान धर्मी हैं–साधर्मी हैं, उसमें किसी के भी प्रति वैर–विरोध कहाँ रहता है ? अरे, ऐसे आत्मा की आराधना करना, यह धर्मी का कार्य है। ऐसी आराधना, वह धर्म का मंगल महोत्सव है, तथा वह निर्विघ्न है। चैतन्य के आराधक को कोई बाह्य विघ्न बाधक नहीं होते।

❀ मंगल आशीर्वाद ❀

(समयसार कलश : 276)

दोपहर को शांतरसमय गंभीर प्रवचन में गुरुदेव ने कहा कि चैतन्य चमत्कार को जयवंत कहकर उसका सर्वोत्कृष्टपना बतलाया, वह मंगल है... ऐसा कहकर अंत में आशीर्वाद सहित आचार्यदेव ने समयसार समाप्त किया है। इस 'आत्मख्याति' द्वारा आत्मा में चैतन्यभावरूप जो ज्ञानज्योति प्रकाशित हुई है, वह सर्व प्रकार से सदैव जाज्वल्यमान रहो।—अहो, ऐसी चैतन्यज्योति प्रगटी, वहाँ उपद्रव कैसा ? अहा, रत्नमयी दीपक को पवन चलायमान नहीं कर सकता; उसीप्रकार जगत के संयोग चैतन्य के साधक को नहीं डिगा सकते।

अहो, ऐसा चैतन्यमयी आत्मा मात्र अनुमान से किसी के जानने में आये—ऐसा नहीं; वह तो अतीन्द्रिय स्वसंवेदन–प्रत्यक्ष है, और वही समयसार का सार है। अहो, आचार्यदेव ऐसे साधक को मंगल आशीर्वाद देते हैं कि, हे आत्मा ! अब तू स्वसंवेदन के चैतन्यप्रकाश से निरंतर सब प्रकार से जाज्वल्यमान रहना... अप्रतिहतभाव से केवलज्ञान प्राप्त करना।

वाह रे वाह ! देखो यह समयसार का फल, इसमें तो वीतरागी संतों की वाणी है, जिनके हृदय में वह उतर गई, वे तो निहाल हो गये।

❀ धर्मात्मा को भगवान के प्रति भक्ति होती है ❀

[महावीर प्रभु पधारने के बाद का प्रवचन]

भगवान महावीर का स्वागत करते हुए प्रमोद से गुरुदेव कहते हैं कि महावीर पूर्णानंद को प्राप्त करके मोक्ष पधारे, उनकी प्रतिमा की यहाँ स्थापना होनेवाली है। सम्यग्दृष्टि ही

भावनिक्षेप के ज्ञानपूर्वक स्थापना करता है। सम्यग्ज्ञानपूर्वक भगवान को जिसने अपने ज्ञान में स्थापित किया, उस जीव का भगवान के मार्ग में प्रवेश हो गया।

नय, वह सम्यग्ज्ञान का भेद है, और उसका विषय, वह निक्षेप है; उसमें प्रतिमाजी में भगवान की स्थापना का सच्चा निक्षेप सम्यग्दृष्टि को ही होता है। पंडित बनारसीदासजी कहते हैं कि, जिसके अंतर में सुदृष्टि की लहरें उठी हैं, जिसके मिथ्यात्व का नाश हुआ है, और जिसकी भवस्थिति अल्प शेष रही है, ऐसा जीव 'जिनप्रतिमा प्रमाणे जिन सारखी।' अहो, जिनेन्द्रदेव की मूर्ति साक्षात् जिनेन्द्रदेव समान शोभायमान होती है।

'भगत' अर्थात् भगवान का भक्त, सम्यग्दृष्टि, उसे अपने परमात्मस्वभाव का अनुभव करने से सम्यग्दर्शन हुआ है, उसने परमात्मा के यथार्थ स्वरूप को पहिचाना है, और वह उनकी सच्ची स्थापना कर सकता है। गुरुदेव प्रमोद से कहते हैं कि वाह! जिस मुद्रा को देखने से केवलीप्रभु के स्वरूप की याद आती है, अर्थात् वास्तव में अपने परमात्मस्वभाव की याद आती है—वह महोत्सव का मंगलाचरण है। ऐसे सर्वज्ञस्वभाव को श्रद्धा में लेने से सम्यग्दर्शनरूपी बीज का उदय हुआ, उसकी वृद्धि होकर अब केवलज्ञानरूप पूर्णिमा अवश्य होगी।

आचार्य समंतभद्र कहते हैं कि प्रभो! आपकी सर्वज्ञता का ऐसा अद्भुत बहुमान आता है कि मुझे उसकी भक्ति का व्यसन हो गया है... आपकी सर्वज्ञता देखते ही मेरी भक्ति उमड़ जाती है। आपकी जिसे पहिचान है, ऐसा सम्यग्दृष्टि ही आपकी यथार्थ स्तुति करता है।

अत्यंत हर्षित सभा के बीच जिनमुद्रा की महिमापूर्वक गुरुदेव कहते हैं अहो, आज भगवान पधारे; मुद्रा बहुत अच्छी है.. मानो साक्षात् भगवान विराजमान हों! धर्मी की भक्ति ऐसे वीतराग भगवान के प्रति उमड़ पड़ती है।

जैसे भगवान की प्रतिमा पूज्य है, उसीप्रकार उनकी वाणी भी पूज्य है, वह सर्वज्ञता का अनुसरण करनेवाली है। यहाँ परमागम मंदिर में ऐसी जिनवाणी की स्थापना का महोत्सव है, वीतरागी जिनप्रतिमा और जिनवाणी को देखकर धर्मी जीव को आल्हाद होता है, तथा उसके परिणाम निर्मल हो जाते हैं।

भावप्राभृत की 97 वीं गाथा के प्रवचन में गुरुदेव ने कहा कि पर से भिन्न

चिदानंदस्वरूप आत्मा अपने एकत्व में शोभता है। 'आत्मराम अविनाशी आया अकेला'.... चैतन्यस्वभावी आत्मा शाश्वत अकेला है, वह नव तत्त्व में श्रेष्ठ है, तथा वही आनंद की उत्पत्ति का स्थान है; उसकी हे भव्य! तुम अंतर्मुख होकर भावना करो। ऐसा जीव आत्मा को साधने में बहादुर है—शूरवीर है, वह वीर के मार्ग पर चलनेवाला है। अहो, महाभाग्य से भगवान के अंतर की यह बात सोनगढ़ में आयी है, ऐसे आत्मा को जानकर उसमें एकाग्र होना, वह मंगल-उत्सव है।

प्रवचन के बाद महावीरप्रभु परमागममंदिर में पधारे। सीढ़ियों पर चरण रखे बिना प्रभुजी का परमागममंदिर में प्रवेश हुआ; यह दृश्य देखकर प्रभु के गगन-विहार के दृश्य का स्मरण आता तथा आनंद होता था। मुमुक्षुओं की भक्ति से परमागममंदिर गूँज रहा था। सवा पाँच फुट की जिनप्रतिमा को (करीब 56 मन वजन की होने से) विशेष लाने-ले जाने की परेशानी न हो, इसलिये परमागममंदिर में ही विराजमान किया था, और उन प्रतिमाजी की सब विधि वहीं हुई थी। शेष सभी विधि-विधान प्रतिष्ठा-मंडप में हुए थे। भव्य प्रतिष्ठा-मंडप मुख्य रास्ते पर जैन बोर्डिंग को लगकर ही था, उसका नाम था वर्द्धमान नगर।

❀❀❀

परमागम में श्री महावीर प्रभु का इष्टोपदेश

देव-गुरु-धर्म की छाया में आनंदपूर्वक संपन्न शांति का महान उत्सव।
मोक्ष का मंगल-मार्ग सभी के लिए खुला है।

[फाल्गुन शुक्ला 13 का मंगल-प्रवचन]

लगभग पच्चीस हजार श्रोताओं की सभा को गुरुदेव चैतन्यरस के झूले में झुला रहे हैं; श्रोताजन स्तब्ध होकर गुरु-मुख से झरती जिनवाणी का रस पी रहे हैं। वाह! कैसा मधुर रस भरा है, इस जिनवाणी में! ऐसी जिनवाणी माता परमागम मंदिर में आज विराजमान हुई है। और भक्तों का हृदय हर्ष विभोर हो रहा है। गुरुदेव के प्रवचन का भाव आज कोई विशेषरूप से उल्लसित हो रहा है। वे कहते हैं कि भगवान महावीर का जैसा उपदेश था, वैसा ही उपदेश सीमंधर परमात्मा भी वर्तमान में दे रहे हैं कि—आत्मा में ज्ञानक्रिया हो, वह अहिंसा है, तथा राग की क्रिया, वह हिंसा है।—ऐसा उपदेश ही वीतरागता का उपदेश है—वही इष्टोपदेश है।

—oo—

अहो, जगत को चैतन्य-हित का परम इष्टोपदेश देनेवाले ऐसे जिनेन्द्र भगवंतों का पंचकल्याणक प्रतिष्ठा-महोत्सव आनंद-उल्लास से हम सबने मनाया है। शांति का यह महोत्सव वास्तव में विशेष शांतिपूर्वक मनाया गया। जगत जब अग्नि में जलता था, तब वीतरागदेव की छाया में आये भव्य जीव सुवर्णपुरी में विशेष शीतलता का अनुभव करते थे।

जिनेन्द्र भगवान तो चैतन्य की अतीन्द्रिय शांतिरूप परिणमित हुए हैं। जैसे शीतलता के पिंडरूप बर्फ के पास ठंडक लगती है, वैसे अतीन्द्रिय शांति के पिंडरूप देव-गुरु के समीप हमें भी शीतलता का अनुभव हो रहा है। अहो, हमारा महाभाग्य है कि जगत में श्रेष्ठ ऐसे जिनभगवान हमें प्राप्त हुए, तथा उनका मार्ग श्री गुरुदेव ने दर्शाया है। आओ रे आओ! जगत के सभी जीवों के लिए यह मंगलमार्ग खुला है।

भगवान ने अनेकांत, अहिंसा और अपरिग्रह का उपदेश दिया है, उसका यथार्थ स्वरूप क्या है, वह इस ज्ञानक्रिया में आचार्यदेव ने अलौकिक रीति से समझाया है।

आज भगवान की प्रतिष्ठा का और परमागम की प्रतिष्ठा का मंगल दिवस है; जिसमें जन्म-मरण का अंत हो ऐसी बात परमागम में कुन्दकुन्दाचार्यदेव ने प्रसिद्ध की है।

भगवान ने विपुलाचल पर्वत पर राजगृही नगरी में दिव्य-ध्वनि द्वारा जो उपदेश दिया उसकी गौतम गणधर ने बारह अंगों में रचना की, उसके 'ज्ञानप्रवाद' में से आये हुए ज्ञान के प्रवाह का कुन्दकुन्दाचार्यदेव ने इन समयसारादि परमागमों में संग्रह किया है, इनमें वीतरागी संतों ने वीतरागता का उपदेश दिया है। सभी जीव आत्मआनंद के रसिक बनकर धर्म को प्राप्त हों—ऐसी भावना तीर्थंकरों ने पूर्वभव में भायी थी, उसके फलस्वरूप दिव्यध्वनि भी जीवों को आनंद की प्राप्ति का निमित्त है। महावीर भगवान ने जो अर्थरूप उपदेश दिया, वह वीतरागी संतों ने सूत्ररूप गूँथा है, उन सूत्रों की स्थापना का यह महोत्सव है।

भगवान ने परमागम सूत्रों में ऐसा कहा है कि, आत्मा उपयोगस्वरूप है; उपयोग और क्रोध में भिन्नता है; उपयोग की क्रिया में रागरहित जो शुद्धोपयोगदशा है, वही परम अहिंसा धर्म है और रागादि भावों की उत्पत्ति, वह हिंसा है।

परम अहिंसा, वह वीतरागभाव है; इसलिये उसमें अपरिग्रह भी गर्भित है। ऐसी वीतराग दशा ही जीव का जीवन है—ऐसा जीवन भगवान जीते हैं, और अन्य को भी ऐसा जीवन जीने का उपदेश देते हैं। शुद्धोपयोग में चैतन्य के आनंद-शांति-श्रद्धा आदि अनंत गुणों का वेदन एक साथ होता है। उसमें राग का अभाव है, यही अनेकांत धर्म है।

श्री साहू शांतिप्रसादजी पूछते हैं कि प्रथम क्या करना, वह कहो; आत्मानुभव की रीति हम समझना चाहते हैं ?

गुरुदेव उत्तर देते हैं कि आत्मा उपयोगस्वरूप है, क्रोधादि से भिन्न है—ऐसी पहिचान करके भेदज्ञान करना, वही प्रथम कर्तव्य है, उसमें अहिंसा, अनेकांत तथा अपरिग्रह का समावेश हो जाता है, वही जन्म-मरण को नश्ट करने की महान औषधि है।

आत्मभ्रांति सम रोग नहिं... सद्गुरु वैद्य सुजान;
गुरु आज्ञा सम पथ्य नहिं, औषध विचार ध्यान।

भाई, यह बात समझे बिना जन्म-मरण का नाश नहीं हो सकता। कठिन लगे या सरल लगे—किंतु यह समझने से ही हित होगा। आनंदस्वरूप आत्मा की बात दुर्लभ है, किंतु

अशक्य नहीं। संतों ने जिसप्रकार से समझाया है, उसप्रकार से समझे तो वह सुलभ है। भेदज्ञान की अपूर्व बात आचार्यदेव ने इस संवर अधिकार में समझायी है।

उपयोग में उपयोग है, अर्थात् ज्ञानपरिणतिरूप जो उपयोग, वह आत्मा का स्वरूप है; क्रोधादि में उपयोग नहीं है, अर्थात् क्रोधादि आत्मा का स्वरूप नहीं है। दोनों को जाति तथा उनके वेदन का स्वाद बिलकुल भिन्न है—उपयोग के स्वाद में शांति तथा रागादि के स्वाद में अशांति है। भेदज्ञान के ऐसे दृढ़ संस्कार होने चाहिये कि स्वप्न में भी ऐसी श्रद्धा रहे कि 'मैं ज्ञानानंदस्वरूप परमात्मा हूँ।'

पूज्य स्वामीजी हजारों श्रोताओं की विशाल सभा को चैतन्यरस के झूले में झूला रहे हैं; श्रोतागण स्तब्ध होकर गुरुमुख से झरते हुए जिनवाणी के रस का आस्वादन कर रहे हैं। धन्य है जिनवाणी का आलौकिक रस! ऐसी जिनवाणी माता की आज परमागममंदिर में प्रतिष्ठा हुई है और भक्तों का हृदय भी आनंद से ओतप्रोत है। गुरुदेव के प्रवचन में आज कोई अनुपम भाव उल्लसित हो रहे थे; उन्होंने कहा : भगवान महावीर के उपदेश में यह आया था और वर्तमान में महाविदेहक्षेत्र में सीमंधर परमात्मा भी यही उपदेश दे रहे हैं कि—आत्मा के उपयोग में ज्ञानक्रिया है, वह अहिंसा है तथा रागक्रिया, वह हिंसा है।—यही उपदेश वीतरागता का उपदेश है और वीतरागता का उपदेश ही इष्ट उपदेश है।

'यह राग आग दहे सदा तातें समामृत सेइये' भेदज्ञान, वह समामृत है। राग अशुभ हो या शुभ, उसमें समामृत नहीं है, चैतन्य की शांति उसमें नहीं है। चैतन्य की शांति तो उपयोगस्वरूप आत्मा के अनुभव में ही है। ऐसी ज्ञानक्रिया, वह अलौकिक क्रिया है; अहो, ऐसी ज्ञानक्रिया बतानेवाले पाँच परमागमों की आज मंदिर में प्रतिष्ठा हो रही है, तथा उनके बताये अनुसार भेदज्ञान करना, वह आत्मा में भावश्रुत की प्रतिष्ठा है-ऐसा जीव अल्पकाल में अवश्य केवलज्ञान को प्राप्त होगा।

अहा, मानो इस केवलज्ञान की बात को देव बधाई देते हों, इसप्रकार आकाश में जोरदार घरघराहट होने लगी, चारों ओर आनंद फैल गया... किसकी है ये आवाज! अरे, यह तो इस मंगल प्रसंग पर सुवर्णपुरी में पुष्पवृष्टि करने के लिए हेलिकोप्टर-हवाई जहाज आया था। किंतु इस शांत चैतन्यरस की मूसलाधार वर्षा के समय हेलिकोप्टर को देखने की किसे फुरसत थी।

चैतन्य की स्वाभाविक क्रिया तो उपयोगरूप है, उसमें राग का कोई अंश नहीं है। जिसे उपयोगस्वरूप आत्मा की रुचि है, उसे राग की रुचि नहीं रहती है। और उसे सच्चा वीतरागी अहिंसा धर्म होता है। साधक को ज्ञानधारा आनंदरूप व रागधारा दु:खरूप—ऐसी दो धाराएँ भिन्न-भिन्न रहती हैं; आनंदरूप धारा वह अहिंसा धर्म है, अनेकांत है तथा वही रागरहित अपरिग्रह-धर्म है; जो दु:खरूप रागधारा है, वह अहिंसा नहीं है किंतु जितना राग है, उतनी चैतन्यप्राण की हिंसा है, उतना परिग्रह भी है। अहो, ऐसे भेदज्ञान में ही सारभूत आत्मा प्राप्त होता है। अरे, जिससे आत्मप्राप्ति न होकर स्वर्ग प्राप्त हो, उससे आत्मा को क्या लाभ? चाहे आज समझो या कल—आत्मा का ऐसा स्वरूप समझे बिना भव का अंत नहीं आयेगा। भगवान महावीर का उपदेश पर की उपेक्षा करके स्वसन्मुखता कराता है; निश्चय का आश्रय कराके व्यवहार का आश्रय छुड़ाता है।

अहा, ऐसे भेदविज्ञान का उपाय बतलानेवाले परमागमों की रचना करके कुन्दकुन्दाचार्यदेव ने भरतक्षेत्र के जीवों पर महान उपकार किया है; और आज गुरु-कहान उन परमागमों का रहस्य समझाकर हम सब पर महान उपकार कर रहे हैं।

जय महावीर!

सोनगढ़ (सौराष्ट्र) :—पूज्य स्वामीजी राजकोट में सुखशांतिपूर्वक विराजमान हैं। स्वामीजी का मंगल-विहार चैत्र शुक्ला 1, तारीख 24-3-74, रविवार को सोनगढ़ से राजकोट के लिए हुआ है। राजकोट में चैत्र शुक्ला 14, तारीख 5-4-74 तक विराजेंगे और पश्चात् चैत्र शुक्ला 15, तारीख 6-4-74 को बम्बई पधारेंगे। बम्बई में तारीख 24-4-74 तक 19 दिन का प्रोग्राम है। वहीं वैशाख शुक्ला 2 को पूज्य स्वामीजी की जन्मजयंती मनाने का भव्य आयोजन किया गया है।

पधारे सीमंधर भगवान... छाया हर्षानंद महान...

[फाल्गुन शुक्ला दोज : जिनमंदिर की 34 वीं वर्षगाँठ]

सोनगढ़ तो मानो सीमंधर भगवान का धाम है !

इस काल में भरतक्षेत्र में सीमंधर परमात्मा की विशेष प्रसिद्धि सोनगढ़ से ही हुई है।

ऐसे सोनगढ़ में इतना बड़ा धर्मोत्सव होता हो, तब सीमंधरप्रभुजी हमारे बिना कैसे रह सकते हैं ? उत्सव तो पंचमी को प्रारंभ होना था, किंतु भक्तों के प्रिय प्रभुजी दोज को ही पधारकर सुवर्णपुरी में विराजमान हुए।

सं. 1997 के फाल्गुन सुदी दोज को सोनगढ़-जिनमंदिर में सीमंधर प्रभुजी की प्रतिष्ठा हुई, उसे इस फाल्गुन सुदी दोज को 33 वर्ष पूरे होकर 34 वाँ प्रारंभ हुआ। अहा, प्रभुजी विराजमान होने के बाद कैसी अद्भुत धर्मप्रभावना हो रही है। विदेहीनाथ की वाणी सोनगढ़ के संतों के जीवन में गुँथी हुई है... उसके प्रताप से आज भरतक्षेत्र में आनंद-मंगल वर्त रहा है, और अनेक जीव धर्म को प्राप्त हो रहे हैं।

❁ भूतकाल के तीर्थंकर महावीर भगवान,

❁ वर्तमान तीर्थंकर सीमंधर भगवान,

❁ तथा 'सूर्य' जैसे तेजस्वी भावी तीर्थंकर भगवान।

अहो, त्रिकालवर्ती तीर्थंकरों का यह मंगल संगम... आज हम प्रत्यक्ष देख रहे हैं... और उसकी मंगल-छाया में कल्याण कर रहे हैं। (फा.सु. : 2, मोक्षप्राभृत के प्रवचन में) गुरुदेव ने जिनमार्ग के महान प्रमोद से कहा कि अहो ! भगवान के शासन में स्वद्रव्य से मोक्ष कहा है, तथा परद्रव्य के आश्रय से बंधन कहा है, इसलिये परद्रव्य से और रागादि से विरक्त होकर चैतन्यमय स्वद्रव्य में लीन होना यह जिनागम का सार है।

परदव्वरओ बज्झदि विरओ मुच्चेइ विविहकम्मेहिं।
एसो जिणउवएसो समासदो बंध मुक्खस्स ॥13॥

भगवान के उपदेश का ऐसा संदेश श्री कुन्दकुन्दाचार्य विदेह में जाकर लाये हैं, और

वही उपदेश इन परमागमों में भरा है, उसके बहुमान का यह उत्सव है।

प्रवचन के पश्चात् भगवान सीमंधर तथा भगवान महावीर प्रभु की भव्य रथयात्रा निकली थी; पाँच हाथियों के ऊपर पाँच परमागम, पश्चात् अजमेर का रथ, हाथी, सोनगढ़ का रथ आदि से सुशोभित ऐसी यह प्रथम रथयात्रा थी। सर्वत्र जिनेन्द्र शासन का जयजयकार सुनकर आनंद होता था।

फाल्गुन सुदी 5 के प्रवचन में सवेरे संवर-अधिकार का मंगल-प्रारंभ हुआ; उसका मंगल श्लोक (125) शुभकाम की सूचना देता है—उसमें भेदज्ञान की महिमा से आचार्यदेव कहते हैं कि—

अनादिकाल से अपने विरोधी संवर को जीतने के लिये अत्यंत मद हो गया है, ऐसे आस्रव का तिरस्कार करने से जिसने सदा विजय प्राप्त की है—ऐसे संवर को उत्पन्न करती, पररूप से भिन्न (परद्रव्य तथा उनके निमित्त से होनेवाले भावों से भिन्न) अपने सम्यक्स्वरूप से प्रकाशती, चिन्मय, उज्ज्वल और निजरस (चैतन्यरस) के भार से युक्त—अतिशयता से युक्त भेदज्ञान ज्योति प्रगट होती है, फैलती है। वह मंगल है।

दोपहर को प्रवचन में पद्मनंदी मुनिराज रचित ऋषभजिन स्तोत्र चलता था। प्रारंभ के पाँच श्लोक—

जय ऋषभ नाभिनंदन त्रिभुवननिलय एक दीप तीर्थंकर।
जय सकल जीववत्सल निर्मलगुण-रत्ननिधे नाथ॥1॥

(1) श्रीमान नाभिराजा के नंदन तथा त्रिभुवनरूपी घर के एक दीपक, और धर्मतीर्थ की प्रवृत्ति करानेवाले ऐसे हे ऋषभदेव तीर्थंकर! आप इस लोक में जयवंत रहो। तथा सभी जीवों पर वात्सल्यभाव रखनेवाले और निर्मलगुण-रत्नों के निधान ऐसे हे नाथ! आप इस लोक में सदा जयवंत रहो।

(2) समस्त सुर-असुरों के चित्र-विचित्र मणियों से मुकुट की किरणों से जिसका सिंहासन चित्र-विचित्र है, ऐसे हे जिननाथ! जो आपका दर्शन करता है—स्तुति करता है तथा आपका जप और ध्यान करता है, वह मनुष्य धन्य है।

(3) हे जिनेन्द्र, हे भगवान! हम आपको चर्मचक्षु से भी देखते हैं, तो भी हमें ऐसा

अपार हर्ष होता है कि वह तीनलोक में नहीं समाता; और यदि हम ज्ञानरूपी नेत्र से आपको देखें तो हमें कितना आनंद होगा! यह हम नहीं जान सकते।

(4) हे जिनेन्द्र! जिसने समस्त वस्तुओं के विस्तार को विषय बना लिया है, ऐसे अनंत ज्ञानस्वरूप आपकी, जो पुरुष स्तुति करता है वह, कुएँ का मेंढ़क समुद्र के विस्तार का वर्णन करने जैसा है।

(5) हे जिनेश, हे प्रभो! आपके नाम के कीर्तन मात्र से भी हमारे जैसे मनुष्यों के पास आज्ञांकित मनोवांछित लक्ष्मी चली आती है।

ऋषभदेव भगवान 'सर्वार्थसिद्धि' विमान से इस पृथ्वी पर आने से, वहाँ की शोभा घट गयी और भरतक्षेत्र की शोभा बढ़ गयी। आचार्यदेव अलंकार से ऐसा कहते हैं कि नाथ! आपकी चैतन्यशोभा के सामने सर्वार्थसिद्धि भी हमको निस्तेज भासित होता है। सर्वार्थसिद्धि की शोभा आपके कारण थी, आपके बिना सर्वार्थसिद्धि का विमान शोभा नहीं देता। ऐसा कहकर पुण्य के फल की अपेक्षा चैतन्य की महिमा विशेष बतायी है।

देव-शास्त्र-गुरु के उत्सव का मंगल प्रारंभ फाल्गुन सुदी पंचमी से हुआ। प्रातःकाल प्रतिष्ठा-मंडप में सीमंधरप्रभु तथा महावीरप्रभु विराजमान हुए, वीतरागी शांति का प्रतीक जैनधर्मध्वज गगन में लहराने लगा... हजारों भक्तजन प्रभु का मंगल उत्सव मनाने के लिए पधारे, प्रवचन के बाद पंचपरमेष्ठी भगवंतों की पूजा हुई।

तीर्थधाम सोनगढ़ में आनंदपूर्वक संपन्न

परमागम-मंदिर प्रतिष्ठा-महोत्सव

चैतन्यतत्त्व की अनंत महिमा को जगत में प्रसिद्ध करनेवाले
श्री जिनेन्द्रदेव के पंचकल्याणक जयवंत वर्तो!
परम शांतिरूप जैनधर्म जयवंत वर्तो!

श्री जिनेन्द्रभगवान का पंच कल्याणक महोत्सव वह आत्महित का मंगल अवसर है; इस अवसर में जगत के बहुत जीव धर्म को प्राप्त होते हैं। ऐसा अवसर साक्षात् देखना वह महाभाग्य है।

महोत्सव के मंगल-आशीर्वादरूप गुरुदेव कहते हैं कि, यह तो ज्ञान व शांति का महोत्सव है, बीच में शुभराग हो, परंतु आत्मा का सच्चा ज्ञान व शांति वही धर्म का बड़ा महोत्सव है।

[पंचकल्याणक महोत्सव का आँखों देखा हाल : लेखक - ब्रह्मचारी हरिलाल जैन]

भगवान महावीर-मोक्षगमन के इस 2500 वें वर्ष में सोनगढ़ के परमागम-मंदिर में महावीर भगवान की प्रतिष्ठा हुई व पंचकल्याणक उत्सव मनाया गया। भारत के मुमुक्षु अत्यंत उत्सुकता से जिसका रास्ता देखते थे, वह मंगल उत्सव फाल्गुन सुदी 5 से 13 तक आनंद से मनाया गया; बीस हजार से अधिक भक्तों ने उसमें उत्साह से भाग लिया। महोत्सव के मंगल प्रारंभ में गुरुदेव ने कहा कि यह तो ज्ञान व शांति का महोत्सव है, बीच में शुभराग हो, लेकिन वास्तविक प्रयोजनभूत तो सम्यग्ज्ञान है। आत्मा का यथार्थ ज्ञान व शांति, वही धर्म का बड़ा महोत्सव है।

जैसे-जैसे उत्सव नजदीक आता था, वैसे-वैसे भक्तजन अंतरंग उत्साह से नयी-नयी तैयारियाँ करते थे। घर-घर मंगल-गीत गाये जाते थे, तोरण-मंडप बाँधे जाते थे, विविध श्रृंगार होते थे, गुरुदेव परमागम की महिमा प्रसिद्ध करके मुमुक्षुओं के उत्साह को उत्तेजित करते थे।

अरे, ऐसा अवसर कहाँ से आये! उत्सव की पूर्व तैयारी के समय बाह्य में विचित्र वातावरण और उसमें ऐसा महोत्सव! धर्मकाल में ही 700 मुनियों पर घोर उपसर्ग का आज स्मरण होता था। अरे, चौथे काल जैसे धर्मकाल में भी धर्म पर उपसर्ग हुआ था! उपसर्ग भी जहाँ धर्म हो, वहीं होगा न? अधर्म पर उपसर्ग क्या होगा? जहाँ धर्म नहीं, वहाँ उपसर्ग किस पर होगा? लेकिन धर्म पर आया उपसर्ग अधिक काल तक नहीं टिक सकता। राष्ट्र का और उसमें भी गुजरात का राजकीय-सामाजिक वातावरण जब एकदम क्षुब्ध हो गया था, तब उसका प्रभाव सोनगढ़ भी पहुँच गया, अरे दो-तीन दिन तो गंभीर चिंताजनक स्थिति में कार्यकर्ताओं ने भोजन तथा विश्राम भी नहीं लिया... उत्सव का क्या होगा? इसकी निरंतर चिंता में हजारों भक्तजन उदास थे... परंतु... यह तो जैनशासन का महोत्सव! जैनधर्म की वीतरागी शांति के सामने अशांति कैसे टिक सकती है? वाह! जैनधर्म तेरा प्रभाव! जयपुर से वीरनाथ प्रभु पधारने की तैयारी हुई और विपत्ति के बादल बिखर गये, सुवर्णपुरी पुनः आनंद से खिल उठी... उत्सव के मंगल-वाद्य बजने लगे... भक्तों के हृदय प्रभुभक्ति से प्रफुल्लित हुए...

पधारो वीर प्रभु भगवान!

— उत्सव के समय की मंगलभावना —

(विद्वान श्री रामजीभाई का संदेश)

यह महोत्सव समस्त जगत को परम शांति तथा कल्याण का कारण है; क्योंकि भगवान महावीर-निर्वाण-महोत्सव के ढाई हजारवें वर्ष के अनुसंधान में यह उत्सव मनाया जा रहा है। उनकी दिव्यध्वनि का अनुसरण करके भगवान कुन्दकुन्ददेव ने महान वीतरागी परमागमों की रचना करके इस जगत को कल्याण के लिए भगवान का संदेश दिया, और उन परमागमों का रहस्य गुरुदेव आज हमें समझा रहे हैं, इन परमागमों के बहुमान के लिए यह महोत्सव है; वह सर्व जीवों का कल्याण करो।

स्वर्णधाम-स्वर्णपुरी (सोनगढ़) में

परमागम पंचकल्याणक-प्रतिष्ठा-महोत्सव एवं अनेक सम्मेलन

[लेखक : श्री ज्ञानचन्द्र 'स्वतंत्र']

वासौदा से मैं मित्र-परिवार के साथ सोनगढ़ में होनेवाले विविध आयोजनों एवं पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव में भाग लेने आ गया था।

स्टेशन पर आते ही स्वयंसेवक बंधु स्पीकर द्वारा यात्रियों के लिये सभी प्रकार की मेला में उपलब्ध होनेवाली सुविधायें बतला रहे थे। स्टेशन के प्रमुख द्वार पर 'कहान-गुरु स्वागत महोत्सव स्वर्णधाम' का विशाल लाल सूचनापट लगा था। स्टेशन को झण्डियों से सजाया था। झण्डियों पर लिखा था कुन्दकुन्द भगवाननो जय, दंसण मूलो धम्मो, अमृतचंद्रदेवनो जय हो, कहान गुरु जयवंत बरतो। स्टेशन पर कुली की व्यवस्था और ट्रकों द्वारा यात्रियों के सामान पहुँचाने की व्यवस्था निःशुल्क थी।

यात्रियों के लिये आवास, जल, प्रकाश, भोजन, चाय-नास्ता आदि की निःशुल्क व्यवस्था थी। गुजराती भोजनालय, मारवाड़ी भोजनालय, शुद्ध भोजनालय ऐसे तीन भोजनालय चालू थे, जिनमें हजारों यात्री दोनों समय भोजन करते थे। सूर्यास्त तक भोजनालय खुले रहते थे।

सोनगढ़ एक ग्राम है। 400 कच्चे-पक्के मकान और 4 हजार की जनसंख्यावाला ग्राम है। पर आज सोनगढ़ एक तीर्थधाम बना हुआ है। जब से यहाँ पूज्य स्वामीजी का पदार्पण हुआ, तभी से यह सोनगढ़ स्वर्णपुरी, स्वर्णधाम अथवा तीर्थधाम से प्रसिद्ध हो गया है।

सोनगढ़ अब भारत में ही नहीं अपितु अमेरिका, इंग्लेण्ड, अफ्रीका, जर्मनी जैसे देशों में प्रसिद्ध है।

स्वर्णधाम की धरा का एक-एक अणु अध्यात्मवाद से मुखरित होकर बोल रहा है। 'शुद्धोसि बुद्धोसि निरंजनोसि' की अलख ध्वनि लगानेवाले पूज्य स्वामीजी के निवास से यहाँ

का वातावरण ही (द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव) अध्यात्मवाद से गूंज रहा है।

यह निस्संदेह है कि पूज्य कहान गुरु इस 20 वीं शताब्दी के असाधारण सातिशय महिमाशाली पुण्यशाली महामानव हैं। जिन्होंने जैन समाज के लिये एक नयी चेतना, नवीन प्रेरणा एवं जागृति प्रदान की है। इन्होंने सोतों को जगाया है और जागने वाले को एक सही दिशा प्रदान की है।

भाई राजेन्द्रकुमारजी विदिशा के शब्दों में कि तीर्थंकर के गर्भ में आने के छह मास पूर्व से ही रत्नवृष्टि होने लगती है। उसीप्रकार यहाँ पंचकल्याणक प्रतिष्ठा के छह मास पूर्व से ही स्वर्णपुरी नगरी को सजाया जाने लगा था। मेरे विचारों से यहाँ पूज्य स्वामीजी के पुनीत आध्यात्मिक प्रवचनों की अमृतवृष्टि प्रतिदिन ही होती है और उस अमृतवृष्टि को पानकर अगणित श्रोतागण कषायों से संतप्त आत्मा की अग्नि बुझाकर शीतलता प्राप्त करते हैं। कानजीस्वामीजी जैसे सत्पुरुष के मानव समाज पर अगणित उपकार हैं। स्वर्णपुरी आज अध्यात्ममय बनी हुई है।

एक ताजा उदाहरण इसप्रकार है कि मैं विशाल पंडाल के मंच पर बैठा रिपोर्ट लिख रहा था, एक नौजवान जो कि फोटोग्राफी का कार्य करते हैं, उनने मुझसे यकायक पूछा कि स्वामीजी ने अपने प्रवचन में कहा है कि ''राग के स्वरूप से चैतन्यप्रभु भिन्न है'' आप क्या समझे? मैंने कहा राग आत्मा का स्वभाव नहीं है, अपितु विभाव है, शुद्धदृष्टि से आत्मा रागभाव से भिन्न कोई दूसरी ही वस्तु है।

मेरे उत्तर से उसको संतोष मिला, पर मुझे आश्चर्य के साथ आनंद भी हुआ कि कानजीस्वामी के संपर्क में आते ही साधारण व्यक्ति भी आत्मा के सही स्वरूप को जानने लगता है।

प्रतिष्ठाकारक पंडित मुन्नालालजी समगोरया थे और उनके 2-3 सहयोगी विद्वान भी थे। परमागम पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव का सारा श्रेय पूज्य स्वामीजी को ही है; अगर वे स्वर्णपुरी में विराजित न होते तो यह स्वर्णदिन पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव का 25-30 हजार की जनता को देखने के लिये नहीं मिलता।

स्वामीजी का अद्भुत प्रभाव एवं प्रताप है; यही कारण है कि यहाँ कहाननगर का

निर्माण हो गया है, जहाँ शताधिक बंगले बन गये हैं, और कुछ लोग उनमें स्थायी निवास कर पूज्य स्वामीजी के पवित्र शुद्ध आध्यात्मिक उपदेशों को सुनकर आत्महित में रत हैं।

सौराष्ट्र प्रान्त में दिगम्बर जैन का कोई नाम नहीं जानता था, केवल भावनगर और पालीताना में 3 हजार श्वेताम्बर मंदिरों के बीच केवल एक दिगम्बर जैन मंदिर था। पर आज सौराष्ट्र में 40 दिगम्बर जैन मंदिरों का निर्माण पूज्य स्वामीजी के द्वारा हुआ है; और हजारों व्यक्ति वीतरागमय दिगम्बर जैन धर्म का पालन करते हैं। अगर स्वामीजी व्यवहार को न मानते होते तो दिगम्बर जैन मंदिरों का निर्माण और तीर्थयात्राएँ भी न करते।

जो लोग मूलतः दिगम्बर जैन हैं, उनका उतना शुद्ध व्यवहार नहीं है, जितना कि यहाँ के मुमुक्षुओं का है। यहाँ के मुमुक्षुगण रात्रि को भोजन नहीं करते, कन्दमूल, आलू, बैंगन, प्याज आदि अभक्ष्य वस्तुएँ सेवन नहीं करते। होटल-रेस्टोरेंट में जाते नहीं। बिना जिनदेवदर्शन किये भोजन नहीं करते। ये मुमुक्षुगण मूलतः दिगम्बर जैनों में नहीं जन्मे थे। पर इनका खानपान, आचार-विचार संबंधी बहुत ही शुद्ध व्यवहार है।

तब दूसरी ओर मैं प्रतिदिन देखता हूँ कि जो अपने को जन्मजात दिगम्बर जैन कहने में गौरव मानते हैं, उनमें अधिकांश व्यक्ति रात्रि को भोजन करते हैं, अभक्ष्य वस्तुएँ खाते हैं, विवाह-शादी में रात्रि को भोजन बनता है, आमतौर से होटलों में जाते हैं।

हमारे लिये यहाँ यह तौलना है कि हम अच्छे हैं या हमारे मुमुक्षु भाई अच्छे हैं? मेरे अनेक मित्र यहाँ के (स्वर्णपुरी) लोगों को व्यवहारभ्रष्ट और एकांतवादी कहते हैं, उनको यहाँ कुछ दिन ठहरकर प्रत्यक्ष ही देखकर निर्णय करना चाहिये कि सत्यता क्या है—वास्तविकता क्या है?

सोनगढ़-स्वर्णपुरी के आकर्षण—

सीमंधर जिनालय, समवसरण मंदिर, स्वाध्याय मंदिर, मानस्तंभ, कुन्दकुन्द मंडप, कुन्दकुन्द-कहान सरस्वती भवन, भगवान महावीर-कुन्दकुन्द परमागम मंदिर।

शिक्षण संस्थायें—

गोगीबाई श्राविकाश्रम, जैन विद्यार्थीगृह, इनके अतिरिक्त यात्रियों को सभी प्रकार की सुविधा के लिये खुशाल जैन अतिथिगृह सदैव सेवारत है।

नवीननगर—मेला महोत्सव के समय महावीरनगर, सन्मतिनगर, वर्धमाननगर, कुन्दकुन्दनगर, कहाननगर बसाये गये थे। जिनमें 20-25 हजार यात्री ठहरे थे।

पूर्व पश्चिम उत्तर दक्षिण भारत की चारों दिशाओं से यात्रीगण आये थे। (आसाम, बंगाल, गुजरात, बिहार, उड़ीसा, महाराष्ट्र, पंजाब, मध्यप्रदेश, राजस्थान आदि) अधिकांश यात्री मध्यप्रदेश थे। जबलपुर नगर से ही लगभग एक हजार यात्री आये थे। कुछ विरोधी मित्रों ने ऐसा प्रचार किया कि सोनगढ़ की पंचकल्याणक प्रतिष्ठा कैंसिल हो गयी, वहाँ की खाद्य सामग्री गुजरात सरकार ने जब्त कर ली-छीन ली। इस अफवाह से सैकड़ों-हजारों यात्री यहाँ आने से रुक गये। अगर विघ्नसंतोषी मित्रगण ऐसी अफवाह न उड़ाते तो कम से कम यहाँ 50-60 हजार यात्री महोत्सव में सम्मिलित होते। शताधिक व्यक्ति तो प्रतिष्ठा के दो-तीन सप्ताह पूर्व ही आ गये थे।

समितियाँ—यात्रियों के लिये सभी प्रकार की सुविधायें देने के लिये 43 समितियों का निर्माण हुआ और सभी समितियाँ सेवारत थीं। प्रमुख निम्नप्रकार थीं—आवास, जल, विद्युत, भोजन, सफाई, पंडाल व्यवस्था, पोस्ट आफिस, वाहन व्यवस्था, औषधालय, सुरक्षा।

पंडाल—एक वृहदाकार विशाल पंडाल 360 खंभों से बनाया गया था, जिसके अंदर 30-40 हजार की जनता बैठती थी। विविध प्रकार के रंगबिरंगी बल्ब एवं टयूब से सुसज्जित, सर्वत्र अनेक प्रकार की रंगीन मुद्रित झंडियों से पंडाल अपनी अपूर्व ही शोभा छटा दिखला रहा था। पंडाल में दो विशाल मंच थे, एक मंच खासकर पंचकल्याणक प्रतिष्ठा के कार्यक्रम के लिये था तो दूसरे मंच पर पूज्य स्वामीजी के प्रवचन एवं अनेक (जिस दिन जो निश्चित हो) सम्मेलनों के कार्यक्रम होते थे।

प्रत्येक दिन एक-एक कल्याणक-क्रिया शास्त्रोक्त पद्धति से तथा आध्यात्मिक ढंग से होती थी। प्रसंगवशात पूज्य स्वामीजी कल्याणक पर भी विवेचन करते थे।

विद्वत् सम्मेलन—दिनांक 2, 3 मार्च को पंडित फूलचंद्रजी सिद्धांतशास्त्री वाराणसी की अध्यक्षता में हुआ, जिसमें 140 विद्वानों ने भाग लिया था। विद्वानों में कानजीस्वामी के विरोधी, माध्यस्थ एवं समर्थक तीनों प्रकार के ही विद्वान आये थे।

पंडित जगन्मोहनलालजी ने कहा कि यहाँ अपने पुरुषार्थ द्वारा धर्म प्राप्त किया है, किंतु

जो मूलत: दिगम्बर जैन हैं, वे अपने धर्म को अपनी थाती मानते हैं पुरुषार्थ नहीं करते, हम अमानत में ख्यानत करते हैं।

पंडित कैलाशचंद्रजी ने कहा कि स्वामीजी ने अपनी करनी से अपनी कथनी को बदल डाला है। अध्यात्मवाद की इतनी बड़ी भीड़ कभी नहीं लगी जो आज लग रही है।

विद्वत् सम्मेलन की विशेषता यह रही कि अधिक प्रस्ताव पारित न होकर 3-4 प्रस्ताव ही जो कि अत्यधिक उपयोगी थे, वे ही पारित हुए। क्योंकि सम्मेलन एवं सभा-सोसायटियों में अनेकानेक प्रस्ताव पारित भयातिरेक में कर दिये जाते हैं, जो केवल कागज के घोड़े हैं; यहाँ फाइलों में बंद होकर अपनी दम घोंटा करते हैं।

प्रथम शोक प्रस्ताव अध्यक्ष की ओर से प्रस्तुत होकर पारित किया गया। दूसरा प्रस्ताव तीर्थक्षेत्र सुरक्षा संबंधी था जिस पर बाबूभाईजी मेहता ने विगतवार प्रकाश डाला, और स्वामीजी की मंगलवर्धिनी छाया में 'श्री कानजीस्वामी तीर्थरक्षा समिति' का निर्माण हुआ। इस समिति को जो आय होगी उसे तीर्थक्षेत्रों की सुरक्षा में अ० भा० दिगम्बर जैन तीर्थरक्षा समिति बम्बई की सम्मतिपूर्वक व्यय किया जायेगा।

दानी गोदीकाजी—इसी समय श्री पूरनचंदजी गोदीका ने तीर्थरक्षा समिति के लिये अच्छी रकम के दान की घोषणा की। श्री गोदीकाजी पंडित टोडरमलजी के ही वंशज हैं। जयपुर में जो टोडरमल स्मारक भवन का निर्माण हुआ है, उसके कर्ताधर्ता निर्माता आप ही हैं। वीतराग विज्ञान विद्यापीठ जयपुर के निर्माण में भी आपका महत्वपूर्ण भाग है। धी और धन का आपके पास अच्छा समन्वय है और आप उसका अच्छा ही सदुपयोग कर रहे हैं।

तीसरा प्रस्ताव पूज्य स्वामीजी के अभिनंदन के विषय में था। जिसके प्रस्तावक पंडित परमेष्ठीदासजी थे। इस प्रस्ताव पर पंडित परमेष्ठीदासजी, पंडित हीरालालजी सिद्धांतशास्त्री, ब्रह्मचारी माणिकचंदजी चवरे, शांतिलालजी सेठ के पूज्य स्वामीजी की रचनात्मक कार्यप्रणाली एवं प्रचार-प्रसार के विषय में इतिहास के आधार पर शृंखला की कड़ीबद्ध भाषण, समर्थन एवं अनुमोदना के रूप में हुये। पंडित परमेष्ठीदासजी का भाषण बहुत ही मार्मिक रहा।

चौथा प्रस्ताव—आचार्य कुन्दकुन्द के ग्रंथों का विश्वविद्यालय में पठन-पाठन होना

चाहिये, इस आशय का था, जिस पर डॉ. सौगानी, डॉ. भारिल्ल, डॉ. सुमन, डॉ. लोखंडे, प्रो. सुखनंदनजी के समर्थनरूप में संक्षिप्त भाषण हुये।

तारीख 4 मार्च को वीतराग विज्ञान विद्यापीठ जयपुर की कार्यप्रणाली, रूपरेखा और विद्यापीठ ने अभी तक समाज में क्या-क्या सेवायें दीं, उसकी उन्नति और विकास पर श्री नेमीचंदजी पाटनी ने सुंदर प्रकाश डाला। अनेक सज्जनों ने वीतराग विज्ञान पाठशाला संचालनार्थ 20) मासिक एक वर्ष तक देना स्वीकार किया।

परमागममंदिर—भगवान महावीर-कुन्दकुन्द परमागममंदिर भारतीय दिगम्बर जैन समाज में अद्वितीय एवं असाधारण है। इसके निर्माण में अभी तक 22 लाख रुपये लग चुके हैं, शेष निर्माण-कार्य चालू ही है। यह परमागममंदिर केवल संगमरमर से बना है जो तीन मंजिल का है। विशाल लंबा-चौड़ा कलात्मक है।

मंदिर की संगमरमर की दीवारों पर कुन्दकुन्दाचार्यरचित श्री समयसार, प्रवचनसार, नियमसार, पंचास्तिकाय, अष्टपाहुड़ ग्रंथों को टीका सहित इटली से आयी मशीन द्वारा उत्कीर्ण किया गया है। आचार्य कुन्दकुन्द के ग्रंथों को परमागम कहते हैं। इस परमागम को उत्कीर्ण जिसमें किया गया है, वह परमागममंदिर है और इसका परमागममंदिर नाम सार्थक है।

नीचे की मंजिल में आचार्य कुन्दकुन्द के चरणचिह्न स्थापित किये गये हैं। दूसरी मंजिल पर श्वेत संगमरमर की भगवान महावीर की विशाल पद्मासनस्थ मूर्ति कमलासन पर विराजमान है; मूर्ति सौम्य और वीतरागता की प्रतीक है। परमागममंदिर का निर्माण होना, इसमें कानजीस्वामी की पैनी सूझबूझ ही ने काम किया है जो आनेवाले हजारों वर्षों का इतिहास बन गया है। जिससे भावी पीढ़ी को प्रेरणा और जैन संस्कृति की शिक्षा ही मिलती रहेगी। यह परमागममंदिर 20 वीं शताब्दी का अभूतपूर्व अद्वितीय कार्य है।

पंचकल्याणक की सभी क्रियायें नियमित एवं निश्चित समय पर होती थीं। एक मिनिट का विलंब किये बगैर ही कार्य प्रारंभ हो जाता था। समय का जैसा सदुपयोग एवं मूल्यांकन यहाँ देखा गया वैसा अन्यत्र देखने में नहीं आया। प्रवचन एवं अन्य कार्यक्रम चालू होने पर पंडाल में शांति एवं निस्तब्धता बनी रहना यहाँ की प्रमुख विशेषता थी।

अधिकांश कार्यक्रम स्वामीजी की उपस्थिति में ही होते थे। यहाँ की सामूहिक भक्ति में

जो सजीवता है, जो आह्लाद है, वैसी सामूहिक भक्ति अन्यत्र होना दुर्लभ है। भगवती बहिनश्री–बेन की भक्ति तो दर्शकगणों को मुग्ध कर देती है।

200 वर्ष पूर्व आचार्यकल्प पंडित टोडरमलजी ने अध्यात्मवाद का प्रचार कर तद्युगीन मानव समाज को एक नया मोड़ दिया था। किंतु 200 वर्ष बाद तो पूज्य स्वामीजी ने मानव समाज को जो मोड़ दिया है, और उसके द्वारा जो क्रांति आयी, वह तो कानजीस्वामी को युगपुरुष सिद्ध कर रही है।

दोनों ही अध्यात्मवादी हैं, पर अध्यात्मवाद के प्रचार–प्रसार में पंडितजी की अपेक्षा स्वामीजी का एक विशिष्ट कदम है और महत्त्वपूर्ण स्थान है।

कहाननगर—बहुत ही सुंदर बसा हुआ है। अपने बंगलों का नामकरण चुने हुये शब्दों में किया गया है। नाम मनोज्ञ हैं। कुछ नाम इसप्रकार हैं—जैसे चैतन्यज्योति, चैत्यनिवास, गुरुकृपा, कहानछाया, संतसौरभ, संतसमागम, वैदेहीसदन, कहानकृपा, ज्ञायकनिवास, गुरुप्रसाद, गुरुतेज, अमरज्योति, ज्ञाताकुटीर, कहानछाया, कहानप्रताप आदि।

दिनांक 5 मई को अ० भा० 2500 वाँ भगवान महावीर निर्वाणोत्सव समिति के अध्यक्ष साहूजी की उपस्थिति में हुआ। सर्वप्रथम साहूजी का एवं मिश्रीलालजी गंगवाल का श्रीमान एन.सी. जवेरी, एवं श्रीमान् पूनचंदजी गोदीकाजी ने पंचकल्याणक महोत्सव समिति की ओर से मालाओं द्वारा सत्कार किया।

इसके बाद प्रधानमंत्री बाबू सुकुमालचंदजी ने संक्षिप्त में समिति की रूपरेखा प्रदर्शित की। इसके अतिरिक्त प्रान्तीय मंत्रियों की ओर से भी संक्षिप्त प्रकाश डाला गया।

पंडित हीरालालजी सि. शास्त्री एवं डॉ. पंडित हुकमचंदजी का शास्त्र–प्रवचन

एक रात्रि को शास्त्र–प्रवचन हुआ था। कवि हजारीलालजी काका, कवि सरस सकरार, श्री पंडित युगलजी कोटा के समय–समय पर कविता–पाठ भी होते थे। श्री बाबूभाईजी महेता, श्रीमान् नेमीचंदजी पाटनी एवं पंडित हुकमचंदजी मंच पर सर्वतोमुखी कार्य करते थे।

रात्रि को पुन: अखिल भारतीय 2500 वाँ भगवान महावीर निर्वाणोत्सव समिति का भी सम्मेलन हुआ, जिसमें साहू शांतिप्रसादजी ने केन्द्रीय निर्वाणोत्सव समिति एवं गुजरात प्रांतीय

समिति पर दो शब्द करने के बाद पूज्य कानजीस्वामी के उपदेशों को भगवान महावीर की ही वाणी कहा।

इसके आगे आपने सोनगढ़ को तीर्थधाम कहते हुये कानजीस्वामी की भूरि-भूरि प्रशंसा की। भगवान महावीर के सिद्धांत अहिंसा और अपरिग्रह पर भी दो शब्द कहे।

वयोवृद्ध विद्वान श्री रामजीभाई ने दो दिन दोपहर को विद्वानों से तत्त्वचर्चा करने एवं समझने-समझाने के लिये अपने बंगले पर ही आमंत्रित किया था। तत्त्वचर्चा मार्मिक एवं तलस्पर्शी थी। गुजरात प्रांतीय 2500 वाँ भगवान महावीर निर्वाणोत्सव समिति की कार्य-प्रणाली पर श्री बाबूभाई महेता ने प्रकाश डाला। आपने महत्वपूर्ण बात यह कही कि जिसप्रकार भगवान महावीर का निर्वाणोत्सव 2500 वर्ष पूर्व देवों और मानवों ने मनाया, उसीप्रकार हम सबका भी निर्वाण होना चाहिये। निर्वाण कैसे हो? आत्म-पुरुषार्थ कीजिये निर्वाण होगा।

मध्यप्रदेश के भूतपूर्व प्रधानमंत्री श्री मिश्रीलालजी गंगवाल ने कहा कि आजतक किसी भी तीर्थंकर का निर्वाणोत्सव राष्ट्रीयस्तर पर नहीं मनाया गया। जो कि भगवान महावीर का आगामी दीपावली से दीपावली तक (1 वर्ष तक) मनाया जायेगा। सोनगढ़ से अध्यात्मवाद का बिगुल बजा है। यह पावन अवसर अध्यात्मवाद के प्रचार करने का है।

पंडित कैलाशचंद्रजी ने कहा कि स्वामीजी जैन समाज के लिये वरदान के रूप में अवतरित हुये हैं। सौराष्ट्र के धनकुबेर इतना धन दान में देते हैं कि वह समेटा नहीं जाता। अभी तक 50 लाख का दान हो चुका है, ऐसा मैं समझता हूँ। आत्म-कल्याण के लिये भेदविज्ञान और समाज की भलाई के लिये अभेदविज्ञान की आवश्यकता है, पर होता उल्टा ही है।

दिनांक 6मार्च के प्रात: पौ फूटने के पूर्व भगवान महावीर का निर्वाण कल्याणक महोत्सव मनाया गया। वयोवृद्ध अनुभववृद्ध ज्ञानवृद्ध श्रीमान् रामजीभाईजी दोशी को अखिल भारतीय संरक्षकों, मुमुक्षु मंडलों तथा स्थानीय संस्थाओं की ओर से सत्कार, स्वागत के साथ माल्यार्पण किये गये एवं अ. भा. मुमुक्षु मंडल के अध्यक्ष श्री एन.सी. जवेरी ने मुद्रित अभिनंदन-पत्र एवं रजत निर्मित परमागममंदिर जो कि पालना (झूला) सहित था भेंट किया।

श्री रामजीभाई ने सबका आभार माना। आज भगवान महावीर का निर्वाण कल्याणक

होने के उपलक्ष्य में समागत यात्रीगण तो निमंत्रित थे ही (एक सप्ताह पूर्व से ही), किंतु स्वर्णधाम स्वर्णपुरी सोनगढ़ की समूची जनता भी निमंत्रित थी।

ब्रह्मचर्य दीक्षा

एक घंटा तक कानजीस्वामी के प्रवचन के बाद 11 कुमारिका बहिनों ने आजन्म ब्रह्मचर्य की प्रतिज्ञा श्री कानजीस्वामी से ली, इस समय पूज्य स्वामीजी ने बहिनों को आशीर्वाद देते हुये धर्म का स्वरूप समझाया। पंडित हिम्मतभाईजी ने भी अपना प्रासंगिक प्रवचन किया था।

10.45 बजे भारत के उद्योगपति श्री शांतिप्रसादजी साहू ने परमागममंदिर का उद्घाटन किया। 11 बजे वेदी में जिनबिम्ब विराजमान, आचार्य कुन्दकुन्द के चरणचिह्नों की स्थापना, पंच परमागम सूत्रों का अनावरण, तथा कलश एवं ध्वजारोहण किया गया। दोपहर को शांति यज्ञ के बाद 2.30 बजे से श्री कानजीस्वामी का एक घंटे तक प्रवचन हुआ।

आभार विधि के बाद भव्य रथयात्रा का चल समारोह निकाला गया। रात्रि को आरती, जिनेन्द्र भक्ति, शास्त्र-प्रवचन के बाद इस महान धार्मिक अनुष्ठान की इतिश्री हुई। लेखक ने सभी नये निर्मित नगरों में घूमकर, वहाँ की व्यवस्थायें देखकर और सभा-मंडप (पंडाल) में अचूक हाजरी देकर प्रस्तुत लेख लिखा है। जिस आनंद उत्साह के बीच इस धार्मिक अनुष्ठान का प्रारंभ हुआ, उसी आनंद उत्साह के बीच पूर्णाहुति हुई। कलशारोहण के समय हेलीकोप्टर द्वारा पुष्पवृष्टि भी हुई थी।

प्रतिष्ठा-मंडप में भगवंतों का विराजमान होना तथा धर्मध्वज का आरोहण

फाल्गुन शुक्ला पंचमी के आनंदमय प्रभात का उदय हुआ; चारों ओर जैनधर्म का प्रकाश फैल रहा है। मंगल शहनाई, मधुर वाद्य तथा जोरदार नगारे बज रहे हैं। जिनेन्द्र भगवंत आज प्रतिष्ठा-मंडप में पधार रहे हैं... जगह-जगह पर हजारों साधर्मीजन देव-गुरु के गुणानुवाद से धर्म का मधुर वातावरण गुँजा रहे हैं। अहा, जहर समान संसार-समुद्र के बीच जैनधर्म का यह मधुर अमृत-झरना देखकर हृदय में आनंद होता है। गुरुदेव का महान उपकार है कि जिन्होंने हमें जिनेन्द्र भगवंतों का मार्ग बताया। जयवंत वर्तो यह मार्ग... तथा इस मार्ग के प्रणेता तीर्थंकर। ऐसा सुंदर मार्ग प्राप्त कर आत्महित साधने का यह मंगल-उत्सव है।

प्रात:काल के सवा छह बजे हैं; चारों ओर सीमंधर भगवान तथा महावीर भगवान के जय-जयकारपूर्वक भगवंतों का जुलूस जिनमंदिर से प्रतिष्ठा-मंडप की ओर जा रहा है; प्रारंभ में पंचपरमेष्ठी का मार्गसूचक पचरंगी धर्मध्वज लहरा रहा है, पाँच हाथियों पर पाँच परमागम विराजमान हैं, अजमेर के रथ में महावीर भगवान और सोनगढ़ के रथ में सीमंधर भगवान विराजमान हैं। प्रभुजी प्रतिष्ठा-मंडप में पधारे। भक्तजन मंडप में आकर अपने को धन्य मानने लगे, पश्चात् कहानगुरु के मंगल-हस्त से धर्मध्वज आकाश में लहराने लगा। प्रभुजी पधारने से मंडप की शोभा बढ़ गयी। (धर्मध्वज लहराने का लाभ हिम्मतनगर के भाईश्री ताराचंद पोपटलाल कोटडिया ने; तथा प्रभुजी को मंडप में विराजमान करने का लाभ तलोद के भाईश्री चन्दुलाल कालीदास ने लिया था।)

भव्य सुशोभित वेदी में विराजमान भगवंतों के दर्शन, पूजन के बाद प्रवचन हुआ। अध्यात्म का गंभीर वातावरण चैतन्य की वीतरागी शांति को निमंत्रण दे रहा था। शांतरसमयी मधुरवाणी श्रीगुरुमुख से प्रवाहित होने लगी, आप भी उसके रस का पान करो—

—: मोक्ष के कारणरूप भेदविज्ञान को अभिनंदन :—

❁ भेदज्ञान मंगलरूप है ❁

चैतन्य के कोई अद्‌भुत उल्लासपूर्वक प्रवचन के प्रारंभ में गंभीर ध्वनि से कहा—आज मंगल-महोत्सव का प्रारंभ होता है। भगवान सीमंधर परमात्मा महाविदेहक्षेत्र में विराजते हैं; वहाँ कुन्दकुन्दाचार्यदेव पधारे थे। उन्हें शुद्धात्मा के आनंद का प्रचुर स्वसंवेदन था। आनंद का वेदन तो सम्यग्दृष्टि को भी होता है, परंतु मुनिवरों को तो आत्मा में लीनतापूर्वक उग्र स्वसंवेदन होता है। ऐसे आचार्यदेव ने समयसारादि परमागमों को रचकर जगत के जीवों पर महान उपकार किया है। उसमें से महा मंगलरूप समयसारा का संवर-अधिकार चलता है। राग से भिन्न चैतन्य का अनुभव कैसे करना, यह आचार्यदेव बताते हैं:—

उवओगे उवओगो कोहादिसु णत्थि को वि उवओगो।
कोहो कोहे चेव हि उवओगे णत्थि खलु कोहो॥181॥

उपयोगस्वरूप आत्मा क्रोधादि परभावों से बिल्कुल भिन्न है। आत्मा आनंदरूप तथा क्रोधादिभाव दुःखरूप हैं—ऐसी दोनों की अत्यंत भिन्नता जानकर शुद्धात्मा का अनुभव किया, उसने समस्त जिनशासन को जाना—यही परमागम का सार है तथा मंगलरूप है। सर्व कर्मक्षय के उपायभूत यह भेदज्ञान अभिनंदनीय है।

देखो, मांगलिक में भेदज्ञान की अपूर्व बात आयी है। आत्मा को अपने शुद्धोपयोग के साथ तन्मयपना है, किंतु क्रोधादि के साथ तन्मयपना नहीं। जैसे जड़ और चेतन का स्वरूप अत्यंत भिन्न है, वैसे क्रोधादि और चैतन्य का स्वरूप भी अत्यंत भिन्न है।

हिन्दी-गुजराती-मराठी इत्यादि अनेक भाषा बोलनेवाले हजारों श्रोताजनों से भरी सभा अनेक त्यागी, विद्वान और नेता-गणों से सुशोभित हो रही है, चैतन्य के शांतरस का पान करने के लिए सभी उत्सुक हैं।

गुरुदेव प्रवचन में समयसार के साथ कभी प्रवचनसार, कभी पंचास्तिकाय, नियमसार आदि अनेक परमागमों का आधार देते हैं; और कुन्दकुन्द प्रभु के साथ-साथ समंतभद्रस्वामी, धरसेनस्वामी, पूज्यपादस्वामी, अमृतचन्द्रस्वामी आदि दिगम्बर मुनिभगवंतों को भी बारंबार परम भक्ति से याद करते हैं। अहो, यह तो आत्म-रंजन की रीति है; आत्मा कैसे प्रसन्न और आनंदित हो—ऐसा मार्ग दिगंबर संतों ने सरल और प्रसिद्ध कर दिया है। भगवान! शांत होकर तू उसे समझ!

❁ श्री जिनेन्द्र-भगवान की स्तुति ❁

(पद्मनंदी पच्चीसी में से श्री ऋषभजिनस्तोत्र पर प्रवचन : फाल्गुन सुदी 6)

भगवान की स्तुति करते हुए प्रथम पद्मनंदीस्वामी कहते हैं कि जय ऋषभ नाभिनंदन... नाभिराजा के नंदन भगवान ऋषभदेव की जय हो! अथवा धर्म से जिनकी शोभा है, ऐसे (वृष..भ) तीर्थंकर भगवंतों की जय हो।

ऐसे जय-जयकारपूर्वक भगवान की स्तुति का प्रारंभ करते हैं। अहो, सर्वत्र भगवान के ज्ञान की प्रतीति जिसको अंतर के अनुभवपूर्वक हुई है, उसे ज्ञान की दोज का उदय हुआ।

प्रवचनसार, गाथा 80 में कुन्दकुन्दस्वामी कहते हैं कि अरिहंत भगवान के शुद्ध द्रव्य-गुण-पर्याय को जो पहिचानता है, वह जीव आत्मा के शुद्ध स्वरूप को पहिचानता है, और उसके दर्शनमोह का नाश होकर उसे अवश्य सम्यग्दर्शन की प्राप्ति होती है।

पश्चात् शुद्धोपयोग से रागादि का भी नाश करके केवलज्ञान को प्राप्त होगा। अनंत तीर्थंकर इस उपाय से केवलज्ञान को प्राप्त कर मुक्त हुए, तथा जगत के जीवों को भी मोहक्षय के लिए यही उपाय बताया। अहो! ऐसे तीर्थंकर भगवंतों को और उनके मार्ग को नमस्कार हो।

दिव्यध्वनि में तीर्थंकरों ने ऐसा कहा है कि हे जीव! हमारे शुद्ध-द्रव्य-गुण-पर्याय के साथ तू अपने आत्मा का मिलान करेगा तो तुझे ज्ञान व राग का भेदज्ञान होकर सम्यग्दर्शन की प्राप्ति अवश्य ही होगी।

समंतभद्रस्वामी भी सर्वज्ञपरमात्मा की स्तुति करते हुए कहते हैं कि अहो प्रभो! हमें आपकी स्तुति की आदत पड़ गयी है, (व्यसन हो गया है) अर्थात् सर्वज्ञता देखते ही उसके प्रति बहुमान का भाव उल्लसित हो जाता है।

देखो, धर्मी को अंतर में आत्मा के अनुभव से रागरहित शांति का वेदन वर्त रहा है, तथा बीच में शुभराग की आकुलता का वेदन भी है; उस राग को दुःखरूप जानता है। शुभराग शांति की जाति का न होने पर भी धर्मी को राग का वेदन होता ही नहीं, ऐसा नहीं है।

अहो, यह तो सर्वज्ञपरमात्मा को पहिचानकर उनके गुणों के बहुमानरूप भक्ति की बात है। निश्चय-व्यवहार की संधिपूर्वक ऐसी अपूर्व भक्ति धर्मात्मा को ही होती है, वही परमात्मा के यथार्थ स्वरूप को पहिचानता है।

सम्यग्दृष्टि ऐसा अनुभव करता है कि ज्ञेय–ज्ञातास्वरूप मैं एक हूँ। अहा, जिसके नेत्र खुले हैं, उसे तो अंदर में परमात्मा शाश्वत विद्यमान है।

सर्वज्ञ भगवान अपने वीतरागरस में लीन हैं; वहाँ भक्त कहता है कि हे प्रभो! आप सभी जीवों के प्रति वात्सल्यवंत हो, किसी के प्रति आपको राग–द्वेष नहीं। ऐसा वीतरागभाव, वही वास्तविक वात्सल्य है। हे भगवान! हमारे अनंत गुण–रत्नों को प्रगट करने के लिए आप भंडार हो। चैतन्य का अद्भुत भंडार आपने हमें बताया है।

[अहा, ऋषभदेव तीर्थंकर होने के बाद असंख्य वर्ष व्यतीत हो गये, किंतु आज वे साक्षात् विराजमान हों—इस भाव से गुरुदेव उनकी परम भक्ति का वर्णन कर रहे हैं, और हजारों श्रोताजन मंत्रमुग्ध बनकर भक्तिरस में झूल रहे हैं, वास्तव में जिनेन्द्र–भक्ति का तथा आत्मकल्याण का यह कोई अनोखा स्वर्णिम अवसर आया है।]

उपयोगस्वरूप, सर्वज्ञस्वभावी आत्मा और उसकी पूर्णता को प्राप्त हुए सर्वज्ञदेव, उनके स्वरूप की धर्मी को पहिचान है। इंद्रिय–ज्ञान से व राग से उनकी पहिचान नहीं होती। प्रवचनसार में अलिंगग्रहण के 20 बोलों में उसका अद्भुत वर्णन है।

ऋषभजिन–स्तोत्र की गाथाओं का अर्थ

(6) हे सर्वज्ञ, हे जिनेश! जब आप सर्वार्थसिद्धि विमान में थे, तब उस विमान की शोभा आपके कारण से थी, वह शोभा आपके इस पृथ्वी पर पधारने से, आपके वियोग से उत्पन्न दु:ख के कारण नष्ट हो गयी, ऐसी मैं शंका (अनुमान) करता हूँ।

(7) हे जिनेश्वर! आप जब इस पृथ्वीतल पर अवतरित हुए, तब नाभिराजा के घर में बहुत काल तक आकाश में से वसु की धारा अर्थात् धन की वर्षा हुई, इसलिए यह पृथ्वी 'वसुमती' हुई।

(8) हे प्रभो, हे जिनेन्द्र! आप मरुदेवी माता के गर्भ में स्थित हुए, इसलिए उनके चरण इंद्राणी और देवों द्वारा नमस्कार करनेयोग्य हुए, और जितनी पुत्रवती स्त्रियाँ थी, उन सभी में मरुदेवी का ही पद सबसे प्रथम रहा। (हे वीरनाथ! आप त्रिशलामाता के गर्भ में पधारे, इससे त्रिशलामाता भी जगत्पूज्य हुई।)

(9) हे जिनेन्द्र, हे प्रभो! जब आपको लेकर इंद्र मेरु पर्वत की ओर चला, और आपको गोदी में विराजमान देखा, तब इंद्र के नेत्रों का अनिमेषपना वैसे ही अनेकपना सफल हुआ। (हे चैतन्यदेव, बाह्य के हजार नेत्रों से भी तेरा रूप नहीं देखा जा सकता; वह तो चैतन्य के अतीन्द्रिय चक्षु से ही देखा जा सकता है—ऐसा अद्भुत रूप धर्मी ही देखते हैं।)

(10) हे प्रभो, हे जिनेन्द्र! मेरुपर्वत पर जब आपका जन्माभिषेक हुआ, तब उस जल के संबंध से मेरुपर्वत भी तीर्थ बन गया, और उसी से सूर्य-चन्द्र आदि सदा उस मेरुपर्वत की प्रदक्षिणा देते रहते हैं। (प्रभु! जहाँ-तहाँ हम तो सर्वत्र आपकी ही महिमा देखते हैं....)

प्रतिष्ठा महोत्सव के प्रारंभ में आनंदसूचक ऐसा 'नान्दी विधान' हुआ था; 'मंगल-कुंभ' भगवान के माता-पिता के घर से गाजे-बाजे के साथ लाकर प्रतिष्ठा-मंडप में स्थापित किया गया था। पश्चात् निम्नानुसार सौधर्म आदि 13 इंद्र, कुबेर तथा माता-पिता की स्थापना हुई थी।

❀ पिता-माता : भाईश्री लालचंदभाई तथा नवलबहिन.....	राजकोट
❀ इन्द्रसभा में महावीर का जीव इंद्र : जतीशभाई	सनावद
(1) सौधर्म इंद्र : सेठ पूरणचंदजी गोदीका	जयपुर
(2) ईशान इंद्र : सेठ मनहरलाल धीरजलाल	सूरत
(3) तीसरे इंद्र : श्री मीठालाल मगनलाल दोशी	हिम्मतनगर
(4) श्री शांतिलाल चीमनलाल वेलचंद झवेरी	पालनपुर
(5) श्री माणेकचंदजी हीरालालजी पाटोदी	लोहारदा
(6) श्री हीरालालजी काला	भावनगर

(7) श्री जवाहरलालजी मुन्नालालजी	विदिशा
(8) श्री गांधी मीठालाल मगनलाल	प्रांतिज
(9) श्री माणिकलालजी काला कुचामन	भावनगर
(10) श्री सकरालाल जगजीवनदास गाँधी	सोनासन
(11) श्री नौतमलाल हरिलाल दोशी	बम्बई
(12) श्री कांतिलाल मफतलाल गाँधी	तलोद स्टेशन
(13) सेठ लक्ष्मीचंद केशवजी	नैरोबी
(14) सेठ लक्ष्मीचंद भगवानदास	मुम्बासा
(15) सेठ झवेरचंद पूनमचंद	नैरोबी
(16) सेठ रायचंद डी. शाह	नैरोबी
❀ कुबेर : श्री धीरजलाल फूलचंद तंबोली	जामनगर

अहा, तीर्थंकर के मंगल-कल्याणक का ऐसा धन्य अवसर प्राप्त होने से माता-पिता तथा सभी इंद्र-इंद्राणियों के चित्त में प्रसन्नता थी। प्रतिष्ठाचार्य सागर के पंडित मुन्नालालजी समगोरया थे। वे भी ऐसी महान धर्म-प्रभावना देखकर उत्साह से सब विधि कराते थे। गुरुदेव की प्रसन्नता तो मुमुक्षुओं को अनोखा उत्साह प्रदान करती थी। आचार्य-अनुज्ञा के पश्चात् गुरुदेव ने उत्सव की सफलता का मंगल आशीर्वाद दिया... बस, इंद्र आ गये व मंगल उत्सव शुरु हो गया। प्रथम कार्य इंद्रों ने प्रवचन सुनने का किया।

इंद्रों ने जिनवाणी में जो श्रवण किया, वह हम सब स्वामीजी के द्वारा श्रवण करें।

[प्रवचन : समयसार, संवर-अधिकार]

आत्मा उपयोगस्वरूप है, वह उपयोग में ही है-क्रोधादि में नहीं। उपयोग और क्रोधादि में अत्यंत भिन्नता है। ऐसी भिन्नता का भान करना, वह संवर-धर्म की रीत है।

उत्सव के दिनों में संवर अधिकार पर प्रवचन होते थे। योगानुयोग से, परमागम मंदिर में स्थापित कुन्दकुन्दाचार्यदेव के भव्य चित्र में वे समयसार लिख रहे हैं, उसका जो दृश्य है, उसमें भी वे 'संवर-अधिकार' ही लिख रहे हैं... मानो अभी वे 'संवर-अधिकार' सुनाकर

उत्सव में आये हुए भव्य जीवों को भेदविज्ञान करा रहे हों! ऐसा भाव उस चित्रपट में से झर रहा है। उसके भावों के स्पष्टीकरण में गुरुदेव कहते हैं कि—

प्रभो! तेरा आत्मा कैसा है? उसकी यह बात है। तेरी चैतन्यसत्ता पर से तो जुदी है—किंतु क्रोधादि से भी जुदी है। यदि चैतन्यसत्ता राग से जुदी न हो और दोनों एक हों तो आत्मा का राग से भिन्न अनुभव नहीं हो सकता। किंतु, राग से रहित आत्मा अनुभव में तो आता है। इसप्रकार दोनों की सत्ता भिन्न है।

अहो, अपनी ऐसी चैतन्यसत्ता को जानने से तुझे महान आनंद होगा। इसलिए उसका प्रेम कर। आचार्यदेव समयसार में कहते हैं कि—

इसमें सदा रतिवंत बन, इसमें सदा संतुष्ट रे।
इससे हि बन तू तृप्त, उत्तम सौख्य हो जिससे तुझे॥206॥

हे जीव, तू ज्ञानस्वरूपी आत्मा... तेरी ज्ञानदशा में तन्मय है, राग में तू तन्मय नहीं, राग में और ज्ञान में एकसत्ता की सिद्धि नहीं है। आचार्य कुन्दकुन्द कहते हैं कि, अरे जीव! ऐसा भेदज्ञान करके एकबार चैतन्य का रसास्वादन कर। उपयोग को चैतन्यस्वभाव में अंतर्मुख करने से सम्यग्दर्शन होता है। पश्चात् साथ में जो राग होता है, वह ज्ञान में ज्ञात होता है, किंतु ज्ञान के साथ वह तन्मय नहीं होता। अरे, केवलज्ञान प्राप्त करने की जिसमें शक्ति है, अखंड प्रताप से सुशोभित जिसकी प्रभुत्वशक्ति है, उसे राग से भेदज्ञान करना कठिन लगे—यह शोभता नहीं। चैतन्य की शूरवीरता की एक टंकार से सम्यग्दर्शन हो—ऐसी उसमें शक्ति है, उसे सँभाल! भाई, अपनी चैतन्यवस्तु को अभी नहीं पहिचाना तो फिर कब पहिचानेगा?

पंद्रह हजार स्त्री-पुरुषों की सभा स्थिरचित्त से शांतिपूर्वक चैतन्य की यह बात सुन रही है; वह दृश्य देखकर ऐसा लगता है कि वाह! लोगों को धर्म की कितनी रुचि! विकट परिस्थिति में भी हजारों मील दूर से वे चैतन्यरस का पान करने यहाँ आये हैं! इस काल में जिनभक्तों का ऐसा दृश्य देखने को मिलना, यह भी एक महान लाभ है... वास्तव में जैनधर्म का प्रभाव देखकर धर्मी जीवों का हृदय आनंद से नाचने लगता है।

पूज्य स्वामीजी भी अत्यंत प्रमोदपूर्वक श्रोताजनों को बारंबार 'भगवान.. भगवान' कहकर बुलाते हैं। भगवान! तू तो अपनी चैतन्यसत्ता में है; तेरी चैतन्यसत्ता का एकत्व-विभक्त

स्वरूप इस समयसार में हम निजवैभव से बतलाते हैं, उसे तू अपने अंतरंग-स्वानुभव से प्रमाण करना। देखो! उत्सव में भी वास्तव में करना तो यही है। राग के स्थान में राग हो, परंतु सम्यग्दर्शन और भेदज्ञान किये बिना मोक्ष का मार्ग हाथ में नहीं आ सकता। सम्यग्दर्शन और भेदज्ञान द्वारा मोक्ष का मार्ग मिलता है, वही महान मंगल-महोत्सव है।

महोत्सव के मंगल-विधान में पंचपरमेष्ठी भगवंतों का आवाहन करके उनकी भावभीनी पूजा की गई। इस पूजन में पंचपरमेष्ठी के गुणों (46+8+36+25+28=143) के प्रति बहुमान से अर्घ चढ़ाये जाते हैं।

आत्मधर्म मासिक-पत्र के स्वामित्व आदि की घोषणा

प्रकाशन स्थान—दिगम्बर जैन स्वाध्याय मंदिर ट्रस्ट, सोनगढ़ (सौराष्ट्र)

प्रकाशन—अंग्रेजी माह की 25वीं तारीख

प्रकाशक—श्री दिगम्बर जैन स्वाध्याय मंदिर ट्रस्ट, सोनगढ़ (सौ.)

मुद्रक—मगनलाल जैन, अजित मुद्रणालय सोनगढ़ (सौ.)

संपादक—ब्रह्मचारी हरिलाल जैन तथा ब्रह्मचारी गुलाबचंद जैन, दिगम्बर जैन स्वाध्याय मंदिर, सोनगढ़ (सौ.)

तंत्री—श्री पुरुषोत्तमदास शिवलाल कामदार

राष्ट्रीयता—भारतीय

स्वत्वाधिकार—दिगम्बर जैन स्वाध्याय मंदिर ट्रस्ट, सोनगढ़ (सौ.)

मैं घोषित करता हूँ कि उपरोक्त विवरण मेरी जानकारी और विश्वास के अनुसार सही है।

व्यवस्थापक—

तारीख 25-3-74 श्री दि. जैन स्वाध्याय मंदिर ट्रस्ट, सोनगढ़

श्री महावीर-कुन्दकुन्द परमागममंदिर पंचकल्याणक प्रतिष्ठोत्सव सोनगढ़ में

पूज्य श्री कानजीस्वामी की सेवा में प्रेषित

भाव-सुमनांजलि

धन्य हुआ सौराष्ट्र-सोनगढ़ परसत चरण तुम्हारे।

शुद्ध-चिदातम-रूप राशि का, ज्ञान भविक-जन भूले।
पीकर मोहमयी-मदिरा, विषयों के झूला झूले।
बाह्य क्रिया को धर्म मानकर, अंतर नहीं जगाया।
निज-स्वभाव को परद्रव्यों से, निशिदिन खूब सजाया।
तुमने भेद-ज्ञान की बरसाई, प्रिय-ज्ञान-सुधारे॥धन्य०॥

कोलाहल से दूर बसे, जंगल में कुटी बनाई।
आत्मधर्म पहिचान मान तज, जानी ना तरुणाई।
विषय, व्यसन, विभ्रम, विकृति से किया स्वयं को न्यारा।
निज स्वरूप का ज्ञान कराया, वही शांति की धारा।
दर्शन, ज्ञान, व्रतादि भावकर, मोह भाव से न्यारे॥धन्य०॥

ज्ञान-दीप में भरा तेल-तप अनुभव की कर बाती।
मुक्ति-रमा के नाम लिख रहे शुभागमन की पाती।
'तुम्हें वरण के लिये कर्म-काराग्रह तोड़ रहा हूँ।
यह अनादि के सखा-संगाती इनको छोड़ रहा हूँ।'
कंटक-कटक कर्म कीचड़ से किये भाव निज न्यारे॥धन्य०॥

यह विशाल परमागम-मंदिर ध्वजा गगन को चूमें।
सीमंधर-जिनराज-जिनालय निरख भव्य-जन झूमें।
कुन्दकुन्द आचार्य ज्ञान-कृति समयसार की धारा।
जैन-तत्त्व-दर्शन गरिमामय बिखर रहा है प्यारा।
आत्मधर्म की दिव्य-ज्योति बिखराई दीप-शिखारे॥धन्य०॥

साधक-साधु, सुधी, समता-धन संयम के अनुगामी।
ज्ञानपुंज! अज्ञान तिमिर हर, ज्ञान-दीप अभिरामी।
जिनवर कथित तत्त्व-चिंतन के, चाहक चतुर-चितेरे।
भेद-ज्ञान परिभाषा-भाषक; कुन्दकुन्द के चेरे।
जन्म-जरा जीवन यामिनी में, तुमने किये उजारे॥धन्य०॥

जहाँ चरण-रज पावन पहुँची अनुपम आनंद बरसे।
बने भव्य देवालय, वंदन करें, भव्य-जन हरषे।
युग युग जियें मुमुक्षु-हितैषी जननायक जन जन के।
देख स्वतः जाग्रत होते हैं, तुमको भाव नमन के।
धन्य कानजीस्वामी जिनवाणी के राजदुलारे॥धन्य०॥

निर्धन या धनवान ज्ञान के सबको द्वार सजाये।
सबमे समता मानव की ममता के भाव जगाये।
क्षणभंगुर लक्ष्मी का शुभ-उपयोग करें जीवन में।
दानवीर आकर झुकते हैं सहसा चरण-शरण में।
नहीं विरोधी से विरोध है क्षमा-धर्म को धारे॥धन्य०॥

धवल-अमल बन रहे जिनालय, कलश, ध्वजा फहराते।
तीरथ बना सोनगढ़ भविजन आत्मज्ञान को पाते।
त्याग और तप इंद्रिय-निग्रह स्वस्थ विचार मनुज के।
सहसा ही हो जाते आकर नम्र विचार दनुज के।
गर्व भर्‌यो गुजरात ज्ञान के बजने लगे नगारे।
धन्य हुआ सौराष्ट्र-सोनगढ़ परसत चरण तुम्हारे॥

(रचयिता-घासीराम जैन 'चंद्र', शिवपुरी, पठयिता-नेमिचंद्र गोंदवाले)

ओ, अनजान बटोही!

हजारीलाल जैन 'काका', पोस्ट-सकरार (झाँसी)

परपद में सुख मान मानकर व्यर्थ उमरिया खोई,
चारों गति में भटक रहा क्यों ओ अनजान बटोदी।

(1) पर में खोज रहा जिस सुख को वह है तेरे अंदर,
एक बार तो देख सुखों का लहरा रहा समुंदर,
बन कर दीन डोलता फिरता मक्का मथुरा काशी,
तू ही स्वयं सिद्ध परमातम अजर अमर अविनाशी,
अब तक मिथ्या भ्रम में पड़कर काफी मंजिल खोई,
चारों गति में भटक रहा क्यों ओ अनजान बटोही।

(2) क्रियाकांड को धर्म समझकर अब तक समय गमाया,
संक्लेशों का सागर झेला खुद को समझ न पाया,
भटक रहा मोहांधकार में उमर गमाता प्रतिक्षण,
तत्त्वों की पैनी छैनी से काट मोह का बंधन,
राग द्वेष को मार तुझे बनना होगा निर्मोही,
चारों गति में भटक रहा क्यों ओ अनजान बटोही।

(3) सद्गुरु बुला रहे हैं तज दे मृगतृष्णा का फेरा,
युगों युगों के बाद आज आया है सुखद सबेरा,
मोहनींद को त्याग भेदविज्ञान हृदय में धर ले,
सम्यक्दर्शन का दर्शन कर जग से पार उतर ले,
'काका' व्यर्थ गमाया नरतन बेल न सुख की बोई,
चारों गति में भटक रहा क्यों ओ अनजान बटोही।

चैतन्यरस का आस्वादन करने हेतु आप सब अवश्य पधारें!

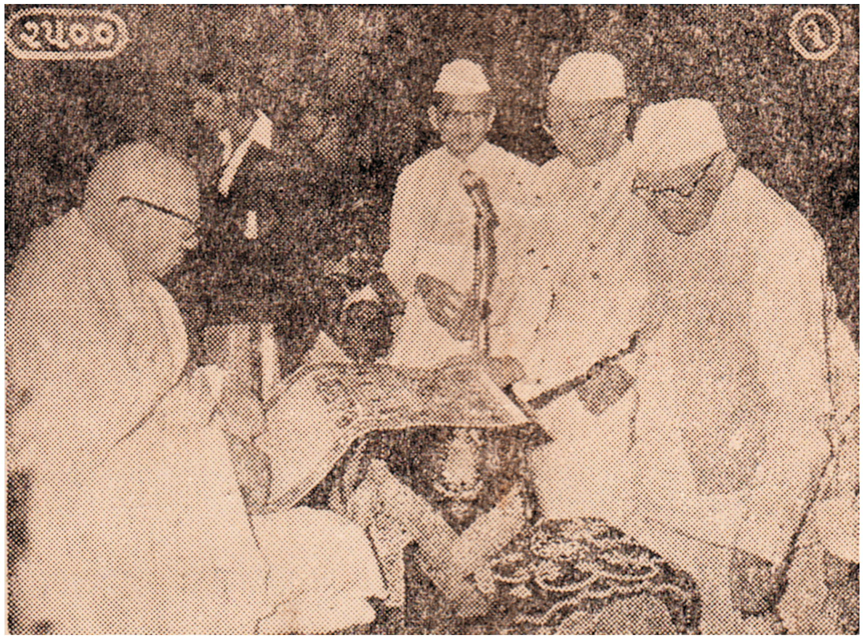

पिछले दिनों सोनगढ़ (सौराष्ट्र) में मनाये गये पंचकल्याणक प्रतिष्ठा-महोत्सव की आमन्त्रण-पत्रिका लिखी गई उस अवसर के दो दृश्य।

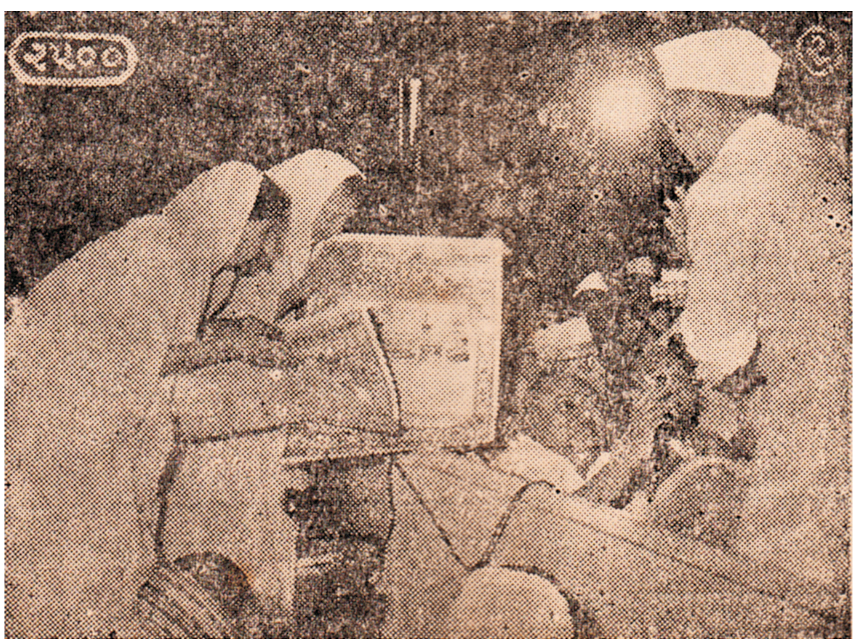

भगवान महावीर के ढाई हजारवें निर्वाणमहोत्सव-वर्ष में

हम इतना करेंगे—

1— जहाँ जिनमंदिर होगा, वहाँ प्रतिदिन दर्शन करेंगे।

2— आत्महित के लिये प्रतिदिन जैनशास्त्र पढ़ेंगे।

3— परमभक्ति पूर्वक जिनमार्ग का सेवन करेंगे।

1— रात्रि भोजन नहीं करेंगे।

2— बिना छना जल नहीं पियेंगे।

3— लौकिक सिनेमा नहीं देखेंगे।

भाईयो और बहिनो! उपरोक्त तीन बातें करना और तीन बातें नहीं करना सबके लिये सरल है। अधिकांशतः तो आप इनका पालन करते ही होंगे, नहीं करते हों तो अब अवश्य करना। इस दिवाली से आनेवाली दिवाली तक (वीर संवत् 2500 से 2501 तक) अवश्य इनका पालन करना। एक स्वीकृति-पत्र निम्नानुसार (पोस्टकार्ड में) लिखकर भेज देना कि—

''महावीर भगवान के ढाई हजारवें वर्ष में निर्वाण-महोत्सव-वर्ष में आपके द्वारा आत्मधर्म में सूचित छह बातों का हम पालन करेंगे।''

लिखनेवाले भाई-बहिन अपने नाम के साथ उम्र भी लिखें। छोटे-बड़े, स्त्री-पुरुष सभी इस पवित्र कार्य में भाग लेंगे—ऐसी आशा है।

संपादक : 'आत्मधर्म' : सोनगढ़-364250

प्रकाशक : श्री दिगम्बर जैन स्वाध्याय मन्दिर ट्रस्ट, सोनगढ़ (सौराष्ट्र)
मुद्रक : मगनलाल जैन, अजित मुद्रणालय, सोनगढ़ (सौराष्ट्र)